युग निर्माण योजना

अगस्त 2024

₹13 – एक प्रति | ₹150 – वार्षिक | वर्ष – 61 | अंक – 2

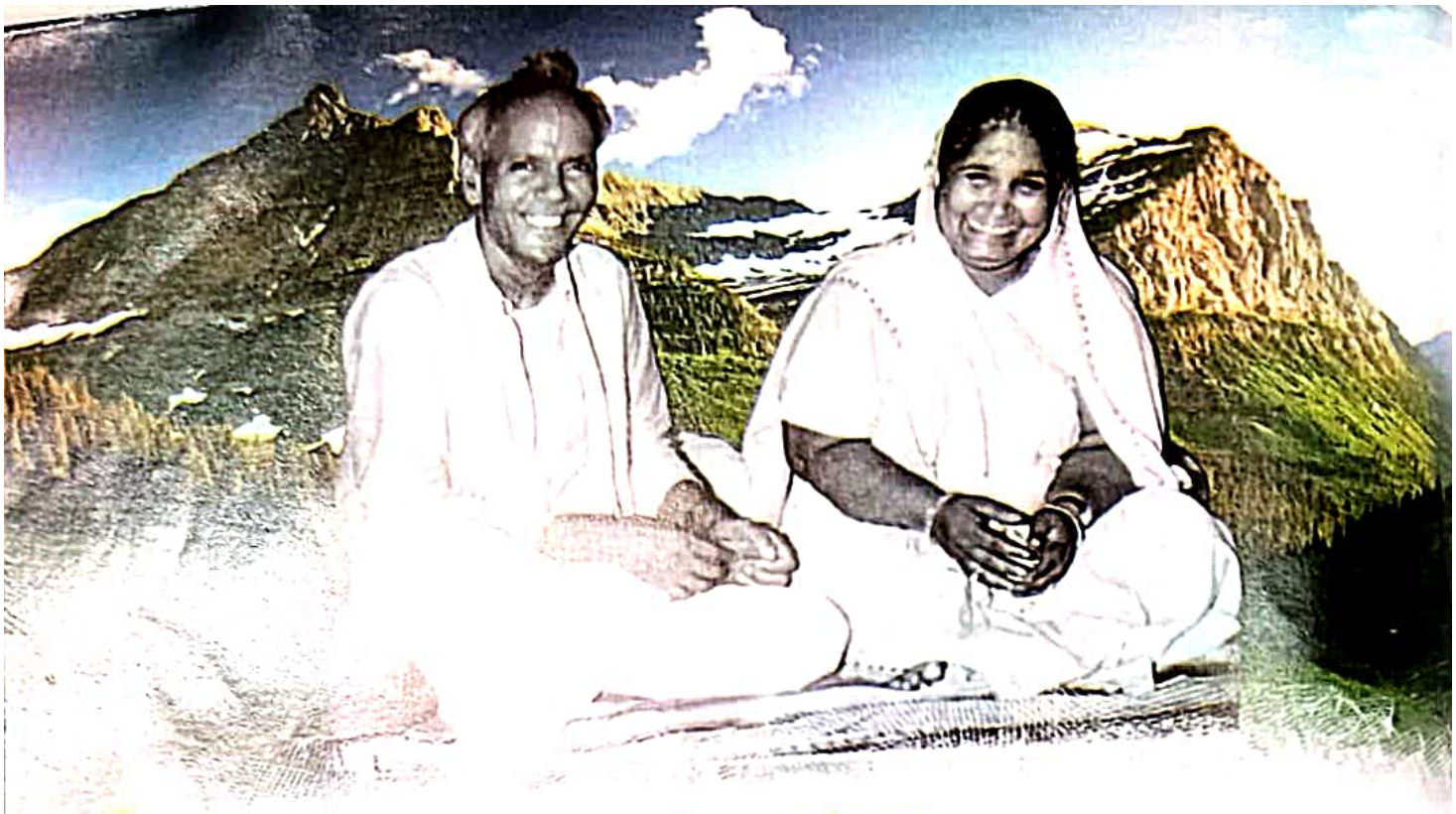

संस्थापक-संरक्षक

इस पत्रिका में प्रकाशित सभी सामग्री युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, अखण्ड ज्योति, शांतिकुंज के संस्थापक-संरक्षक, चारों वेद, 108 उपनिषद्, 6 दर्शन, स्मृतियों, 18 पुराणों के भाष्यकार, 3200 पुस्तकों के लेखक, प्रतिबंधित गायत्री यज्ञ को सर्वसुलभ कराने वाले, महान स्वतंत्रता सेनानी राष्ट्रसंत वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा पं० श्रीराम शर्मा आचार्य एवं शक्तिस्वरूपा वंदनीया माता भगवती देवी शर्मा के विचार, साहित्य एवं दर्शन पर आधारित, संपादित है।

उद्देश्य

- स्वस्थ शरीर
- स्वच्छ मन
- सभ्य समाज
- मनुष्य में देवत्व का उदय
- धरती पर स्वर्ग का अवतरण
- आत्मवत् सर्वभूतेषु
- वसुधैव कुटुंबकम्

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

परमपूज्य गुरुदेव द्वारा 24-24 लाख के चौबीस गायत्री महापुरश्चरण के पश्चात 24 दिन के जल उपवास के बाद प्रथम गायत्री मंदिर की स्थापना, 750 वर्ष पुरानी हिमालय की सिद्ध अखण्ड अग्नि में नियमित यज्ञ, 2400 तीर्थों की रज एवं जल, अखण्ड दीप, निरंतर गायत्री-साधना से ऊर्जान्वित सिद्धपीठ, प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा, आधुनिक चिकित्सा सुविधासंपन्न पारमार्थिक चिकित्सालय, निःशुल्क चिकित्सा शिविर, युग निर्माण विद्यालय, गोशाला। युग निर्माण मिशन के साहित्य का विशाल प्रकाशन-वितरण तंत्र। युग निर्माण योजना (हिंदी), युग शक्ति गायत्री (गुजराती) पत्रिकाओं का प्रकाशन। दिव्य वातावरण में नौ दिवसीय गायत्री-साधना शिविरों का आयोजन (पूर्व अनुमति आवश्यक)।

युग निर्माण मिशन के प्रमुख संस्थान

जन्मभूमि आँवलखेड़ा, आगरा • अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा • युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, मथुरा • श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट, शांतिकुंज, हरिद्वार • ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, हरिद्वार • देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार • गायत्री ज्ञानपीठ, अहमदाबाद • देश-विदेश में 4000 से अधिक गायत्री शक्तिपीठ, चेतना केंद्र, प्रज्ञा संस्थान।

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्
उस प्राणस्वरूप, दुःखनाशक, सुखस्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अंतरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग में प्रेरित करे।

युग निर्माण योजना

नैतिक एवं सांस्कृतिक पुनरुत्थान का मासिक पत्र

संस्थापक / संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ युगद्रष्टा
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
ईश्वर शरण पाण्डेय
सहसंपादक
सूर्यमणि तिवारी
दीनदयाल अमृते
कार्यालय
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि, मथुरा
पि० को० 281003
दूरभाष नंबर
(0565) 2530115, 2530128, 2530399,
मो० 09927086287, 09927086289
(इन पर एस.एम.एस. न करें)

समय : प्रातः 9 से सायं 5 बजे
ई-मेल :
yugnirman@yugnirmanyojna.org

अगस्त —2024
प्रकाशन तिथि : 17.07.2024
वर्ष : 61 अंक : 02
वार्षिक शुल्क : 150 रु०
आजीवन : 3000 रु०
(पचासवर्षीय)
वार्षिक विदेश : 2200 रु०

सुख-दुःख जीवन के अभिन्न पहलू

हम व्यर्थ ही दुःखों में रोते हैं। अपने भाग्य या ईश्वर को कोसते हैं। दुःख तो प्रकृति माता की वह प्रक्रिया है, ईश्वर का वह वरदान है; जिससे हम सचेष्ट होते हैं, जीवन की शक्तियों को उपयोग में लाते हैं और इससे हमारे सुखद एवं उज्ज्वल भविष्य का निर्माण होता है।

सुख में हम हँसते हैं, किंतु दुःख में रोते हैं, चिंता, शोक में डूब जाते हैं। यह हमारे एकांगी दृष्टिकोण और अज्ञान का परिणाम है। सुख की तरह ही दुःख भी जीवन का अभिन्न पहलू है। यदि दुःख न रहे, तो हम सुख से ऊब जाएँगे। सुख के मादक नशे में एकदूसरे का नाश कर लेंगे। इतना ही नहीं, हम सुख का मूल्य ही नहीं समझ सकेंगे। रात्रि के अस्तित्व में ही दिन का महत्त्व है। रात्रि न हो तो दिन महत्त्वहीन हो जाएगा। जिस तरह रात और दिन एक ही काल के दो पहलू हैं, उसी तरह सुख-दुःख भी हमारे जीवन के दो पहलू हैं। जिस तरह रात के बाद दिन और दिन के बाद रात आती है, उसी तरह दुःख के बाद सुख और सुख के बाद दुःख का क्रम चलता ही रहता है। आवश्यकता इस बात की है कि सुख की तरह ही हम दुःख का भी स्वागत करें, उसमें शांतमन, स्थिर, दृढ़ रहकर अपने कर्त्तव्य में लगे रहें। स्मरण रखिए जीवन के शाश्वत मूल्यों को समझ लेने पर, कर्त्तव्य में जुट जाने पर कठिनाई, दुःख नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रहती। ❐

अनुक्रमणिका

❋ आवरण पृष्ठ—1	1
❋ आवरण पृष्ठ—2	2
❋ सुख-दुःख जीवन के अभिन्न पहलू	3
❋ **पर्व विशेष**	
श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व : एक प्रेरणा	5
❋ **श्रावणी पर्व पर**	
पर्व-त्योहारों का प्रयोजन और श्रावणी पर्व	7
❋ **पितृपक्ष पर विशेष लेख**	
श्राद्ध-तर्पण का प्रयोजन	10
❋ **जल संरक्षण**	
आधुनिक पद्धति से पानी बचाएँ	11
❋ अंजीर के औषधीय प्रयोग	13
❋ समर्पण भाव से कर्म करें	16
❋ शिष्टता मानवता का लक्षण	17
❋ **आत्मीय अनुरोध**	19
गुरुदेव के विचारों का सम्मान करें	
(स्वतंत्रता-दिवस के परिपेक्ष्य में)	
❋ ज्ञातव्य	21
❋ शिशु का ऐसे ध्यान रखें	23
❋ **स्वतंत्रता दिवस पर**	
अपने राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्य	26
❋ पारिवारिक आय-व्यय का संतुलन	27
❋ तप और पुण्य	30
❋ कुसंगति से बचें	32
❋ अहंकार का परित्याग कीजिए	34
❋ **पूज्यवर की लेखनी से**	
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय	
अमृत कलश	35
❋ गायत्री तपोभूमि के बैंक खातों का विवरण	36
❋ प्राकृतिक चिकित्सा के शरीर-शोधन शिविर	37
❋ **स्वतंत्रता दिवस पर**	
राष्ट्र आपको करता नमन (कविता)	38
❋ आवरण पृष्ठ—3	39
❋ आवरण पृष्ठ—4	40

अगस्त-सितंबर,2024 के पर्व-त्योहार

रविवार	04 अगस्त	हरियाली अमावस्या
शुक्रवार	09 अगस्त	नाग पंचमी
शनिवार	10 अगस्त	सूर्य षष्ठी
सोमवार	12 अगस्त	तुलसी जयंती
गुरुवार	15 अगस्त	स्वतंत्रता दिवस
शुक्रवार	16 अगस्त	पवित्रा एकादशी
सोमवार	19 अगस्त	रक्षाबंधन/ श्रावणी पूर्णिमा
गुरुवार	22 अगस्त	बहुला चौथ
शनिवार	24 अगस्त	हल षष्ठी
सोमवार	26 अगस्त	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
गुरुवार	29 अगस्त	अजा एकादशी
सोमवार	02 सितंबर	कुशाग्रहणी अमावस्या
शुक्रवार	06 सितंबर	हरितालिका व्रत
शनिवार	07 सितंबर	श्री गणेश चतुर्थी
रविवार	08 सितंबर	ऋषि पंचमी
सोमवार	09 सितंबर	सूर्य षष्ठी
शनिवार	14 सितंबर	जलझूलनी एकादशी
रविवार	15 सितंबर	वामन जयंती
मंगलवार	17 सितंबर	महालयारंभ/विश्वकर्मा जयंती
बुधवार	18 सितंबर	महाप्रयाण दिवस वंद. माताजी
शनिवार	21 सितंबर	माता भगवती देवी शर्मा जयंती
गुरुवार	26 सितंबर	मातृनवमी
शनिवार	28 सितंबर	इंदिरा एकादशी
सोमवार	30 सितंबर	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जयंती

पर्व विशेष

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व : एक प्रेरणा

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व-पूजन, व्रत-उपवास करते हुए हम सब भक्तिपूर्वक मनाते हैं। ईश्वरीय सत्ता का अवतरण धरती पर तब-तब होता है, जब-जब धरती पर अनाचार, पापाचार, अत्याचार चरम पर होता है। भगवान कृष्ण के रूप में भगवान श्री हरि विष्णु का अवतरण भी इसी क्रम में हुआ। कंस, जरासंध, बकासुर आदि असुरों का चारों तरफ अत्याचार बढ़ गया था। साधु-संतों आदि भद्रपुरुषों को निर्दयतापूर्वक प्रताड़ित करने में, सताने में कोई कोर-कसर बाकी न रही थी।

इस वर्ष 26 अगस्त, 2024 को श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व मनाया जा रहा है। देवकी-वसुदेव के पुत्र के रूप में कंस के कारागार में प्रभु अर्द्ध-रात्रि में भाद्रपद कृष्ण पक्ष की अष्टमी के दिन रोहिणी नक्षत्र में अवतरित हुए। विपन्न परिस्थितियों में बचपन गुजरा परंतु बचपन से ही चमत्कारिक शक्ति का परिचय देते हुए उन्होंने पूतना, चाणूर, कंस, कालिया का खेल-खेल में ही संहार कर दिया था।

भगवान योगेश्वर श्रीकृष्ण का जीवन विविधताओं, विशेषताओं और गूढ़ताओं से भरा पड़ा है। उन्होंने अत्यंत कठिन विषम परिस्थितियों में भी साहस-शौर्य का साथ नहीं छोड़ा और मुस्कराते रहे। गोकुल छोड़ा, मथुरा आए, मथुरा छोड़ा द्वारका चले गए। जहाँ से गए वापस लौटकर नहीं आए। यह उनके यौगिक और आध्यात्मिक जीवन की पराकाष्ठा थी। भगवान श्रीकृष्ण महायोगी और पूर्ण पुरुष थे। वे योगी भी थे और योद्धा भी। वे एक कर्मयोगी भी थे, कर्म से निवृत्त संन्यासी भी थे। वे एक साथ अर्जुन के सखा, सुदामा के सहचर, उद्धव के आचार्य, गोपियों के स्वामी, तपस्वी, सिद्ध, संत-वैरागी तथा अध्यात्म पुरुष थे। जितने भी अवतार हुए हैं, उनमें किसी ने भी इतने विविध पहलुओं को स्पर्श नहीं किया था। भगवान श्रीकृष्ण को इसी पूर्णता व पारंगतता के लिए ही पूर्ण पुरुष कहा जाता है। असंभव को संभव करने वाला ही भगवान होता है।

कृष्णावतार की लीलाओं में अध्यात्म की गहन गूढ़ता पिरोई हुई है। भगवान कृष्ण के कार्य अद्भुत और निराले थे। वे एक साथ अनेक प्रकार के कार्य कर लेते थे।

महाभारत युद्धभूमि के बीच उन्होंने अर्जुन को गीता का दिव्य उपदेश भी दे दिया। यह अनोखा कार्य था। उन्होंने यशोदा जी को अपना विराट रूप दिखा दिया तो अर्जुन को भी विराट रूप का दर्शन करा अपने स्वरूप का बोध करा दिया।

राजसूय यज्ञ में भगवान श्रीकृष्ण ने जूठी पत्तल उठाने का दायित्व अपनाकर, जन-जन को अपने अहं को गलाने का संदेश भी दिया एवं सेवा भावना, स्वयंसेवक भावना को सम्मानित भी किया। भक्ति की पराकाष्ठा में वे राधा संग नजर आते हैं। उन्होंने दुर्योधन के छप्पन भोग त्यागकर विदुर के घर जाकर,

रोटी-साग खाकर अपने आत्मीयता की पराकाष्ठा का परिचय दिया।

भगवान श्रीकृष्ण ने गोवर्धन पर्वत उठाकर सहकार की भावना को विस्तार दिया। सामूहिक श्रमदान से बड़े-से-बड़े असंभव कार्य संभव हो जाते हैं। उनका गोप्रेम-गोसेवा, गोपालन, गो-संवर्द्धन एक बड़ा आंदोलन था, जो आज की परम आवश्यकता है।

गोद्रव्यों का महत्त्व आज मनुष्य जीवन के लिए कितना अधिक है। फसलोत्पादन के लिए गोबर की खाद, कीटनाशक के लिए गोमूत्र, कैंसर जैसे घातक रोगों से बचने के लिए गोमूत्र तथा दूध, दही, घृत, गोमूत्र से विनिर्मित अनेक औषधियाँ की उपयोगिता अब और बढ़ गई है।

भगवान श्रीकृष्ण ने जो कहा वह सब अपने जीवन में उतारकर दिखाया। कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग का दर्शन दिया। मुक्ति का मार्ग दिखाया। गीता को भगवान श्रीकृष्ण का शाश्वत कलेवर कह सकते हैं। ज्ञान को जनसुलभ और सर्वोपयोगी बनाने का अपने ही ढंग से अद्‌भुत प्रयास है।

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी पर्व पर हम सब उनके गीता रूपी ज्ञानामृत का पयपान करें और आत्मबोध का आशीर्वाद पाएँ। □

मेवाड़ के राजा न रहे तो उदयसिंह को सिंहासनारूढ़ किया गया, जो अभी पालने में झूलने वाली आयु के थे। संरक्षक बनवीर को नियुक्त किया गया।

बनवीर ने सोचा—क्यों न बालक को मारकर गद्‌दी हथिया ली जाए। लालच का नशा पूरे उभार पर था। रात्रि के समय नंगी तलवार लेकर बनवीर वहाँ पहुँचा, जहाँ पन्ना धाय उसे दूध पिला रही थी। बगल में उसका अपना बच्चा भी सोया हुआ था।

धाय को झकझोरते हुए बनवीर ने पूछा—"बताओ इनमें से उदयसिंह कौन-सा है?" एक जैसे कपड़े होने के कारण वह पहचान नहीं पा रहा था।

पन्ना को वस्तुस्थिति समझते देर न लगी। प्यार को महत्त्व दे या कर्त्तव्य को? सही बताने में अधिक उपयोगी बच्चा जाता था और कर्त्तव्य पर आँच आती थी। गलत बताने से अपना लाड़ला हाथ से जाता था।

असमंजस कुछ क्षण ही रहा। कर्त्तव्य निर्धारित करते देर न लगी। उसने अपने बच्चे की ओर उँगली से इशारा कर दिया, तलवार चली और बच्चे के दो टुकड़े हो गए।

पन्ना का प्राण चीत्कार कर उठा, पर रोने से भेद खुलता था। सो वह आँसू भी पी गई। काम समाप्त हुआ। राजकुमार धाय का बच्चा बना रहा और उसी प्रकार पलता रहा। किसी को कानों-कान खबर तक न पड़ी।

समय बीता। वस्तुस्थिति प्रकट हुई। उदयसिंह को गद्‌दी पर बिठाया गया। गद्‌दी पर बैठते समय उसने पन्ना धाय के चरण चूमे और कहा—"राजपूतों की बलिदान-शृंखला में आप सदा मूर्द्धन्य गिनी जाती रहेंगी।"

श्रावणी पर्व पट

पर्व-त्योहारों का प्रयोजन और श्रावणी पर्व

व्यक्तिगत दृष्टिकोण का परिष्कार करने के लिए जिस प्रकार पूजा-उपासना तथा पारिवारिक रीति-नीति को उत्कृष्ट बनाए रखने के लिए संस्कार-प्रक्रिया है; ठीक उसी प्रकार समाज को समुन्नत और सुविकसित बनाने के लिए सामूहिकता, ईमानदारी, कर्त्तव्यनिष्ठा, नागरिकता, परमार्थपरायणता, देशभक्ति, लोक-मंगल जैसी सत्प्रवृत्तियाँ विकसित करनी पड़ती हैं। उन्हें सुस्थिर रखना होता है। वह भी बार-बार स्मरण दिलाते रहने वाला प्रसंग है। इसी प्रयोजन के लिए देव संस्कृति में पर्व-त्योहार मनाए जाते हैं। इन्हें सामाजिक संस्कार-प्रक्रिया ही समझना चाहिए। साधना से व्यक्तित्व, संस्कारों से परिवार और पर्वों से समाज का स्तर ऊँचा बनाने की पद्धति दूरदर्शितापूर्ण है; इसे हजारों-लाखों वर्षों तक आजमाया जाता रहा है। प्राचीन भारत की महानता का श्रेय इन छोटी दीखने वाली, किंतु प्रवृत्तियों में प्रखरता उत्पन्न करने वाली धर्म के नाम पर प्रचलित विधि-व्यवस्थाओं को ही है।

एक ही क्षेत्र में, एक ही काल में प्रचलित सैकड़ों पर्वों का मनाया जाना संभव नहीं, उनमें से स्थिति के अनुरूप कुछ को ही चुनना पड़ता है। देव संस्कृति में वस्तुत: प्रत्येक तिथि और वार को पर्व माना गया है और उसे मनाने के लिए विशेष धार्मिक विधान भी बतलाया है। इनके सिवाय देवताओं, अवतारों, महापुरुषों की स्मृति अथवा जयंती के लिए भी त्योहार नियत किए गए हैं। कुछ अन्य पर्व जैसे संक्रांति, ग्रहण, कुंभ आदि आकाशस्थित ग्रहों के योग और उनसे पृथ्वी पर पड़ने वाले शुभाशुभ प्रभाव को दृष्टिगोचर रखकर मनाए जाते हैं।

वर्ष में प्राय: चालीस पर्व पहले से हैं। युगधर्म के अनुसार उनमें से दस का निर्वाह बन पड़े तो उत्तम है, वे दस पर्व इस प्रकार हैं— वसंत पंचमी, शिवरात्रि, होली, रामनवमी, गायत्री जयंती, गुरुपूर्णिमा, श्रावणी, जन्माष्टमी, विजयादशमी, दीपावली—इन दस का विशेष महत्त्व है। अत: पर्वों को सोत्साह मनाना चाहिए। इन्हें जहाँ भावनापूर्वक मनाया जाता रहता है, वहाँ सुसंस्कारिता की उमंगें उठती रहती हैं और सत्प्रवृत्तियाँ पनपती रहती हैं, जिसकी आवश्यकता प्रत्येक व्यक्ति व समाज के लिए अनिवार्यत: होती है।

मनुष्य स्वभाव से ही अनुकरणशील प्राणी है। दूसरों को कोई शुभ काम करता देखकर इसके मन में भी वैसा ही काम करने की इच्छा स्वत: उत्पन्न होती है। यही मूल कारण था कि सामूहिक आयोजन के रूप में पर्वोत्सवों का प्रचलन किया गया।

समाज के ढाँचे को सुव्यवस्थित बनाए रखने में पर्वों ने बड़ी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

धर्मधारणा एवं आस्तिकता के भावों की वृद्धि के साथ ही धार्मिक और सामाजिक त्योहारों का एक प्रमुख उद्देश्य सामूहिकता की वृद्धि करना है। मानव जीवन की सफलता

के लिए जैसे व्यक्तिगत उन्नति और सत्प्रवृत्तियों को ग्रहण करने की आवश्यकता है, वहाँ समाज संगठन को सुदृढ़ बनाना और पारस्परिक सहयोग के द्वारा सामाजिक हित की बड़ी योजनाओं की पूर्ति करना भी अत्यावश्यक है। इसके लिए लोगों में पारस्परिक एकता, भाईचारे की मनोवृत्ति का उत्पन्न होना आवश्यक है। हमारे यहाँ होली, दीपावली, गंगा दशहरा आदि के जो त्योहार और पर्व नियत किए गए हैं, उनका विशेष उद्देश्य यही है कि लोग परस्पर प्रेमपूर्वक मिलें और सामूहिकता की भावना को सुदृढ़ बनाएँ।

जो त्योहार या उत्सव किसी प्राचीन महापुरुष या अवतार की जयंती के रूप में मनाए जाते हैं, उनका एक बहुत बड़ा लाभ यह होता है कि जनता को उनके द्वारा सच्चरित्रता, नैतिकता, सेवा, सद्भावना आदि की शिक्षा मिलती है। इस प्रकार के उत्सव संसार के सभी देशों में मनाए जाते हैं और इस बात का ध्यान रखा जाता है कि जन-साधारण अपने उन महान पूर्वजों के चरित्रों से उच्चकोटि के सद्गुणों की प्रेरणा प्राप्त करें। वास्तव में जिस समुदाय में ऐसे महापुरुषों का अभाव है, वह उन्नति की आशा नहीं रख सकता; क्योंकि साधारण मनुष्य के लिए विना किसी मार्गदर्शन अथवा प्रकाशस्तंभ के संसार में सफलतापूर्वक अग्रसर हो सकना संभव नहीं है। यही कारण है कि उन्नति की कामना रखने वाली जातियाँ अपने पूर्वपुरुषों के चरित्रों और महान कार्यों को बड़े गौरव के साथ याद करती हैं।

ज्ञान अकेला, अपूर्ण और अधूरा है। कर्म-कुशलता के अभाव में कथनी और करनी में अंतर आने लगता है। श्रावणी पर्व अपने ज्ञान को, कर्म की शक्ति को सृजन की प्रेरणा देने वाला पर्व है। हमारा ज्ञान वाणी से नहीं, आचरण से व्यक्त हो। हमारी शक्ति किसी को दबाने, झुकाने या निरर्थक कार्यों में नहीं, सृजन में लगे। श्रावणी पर्व की पृष्ठभूमि में जो पौराणिक कथा है, विष्णु की नाभि से कमल नाल का निकलना और उसमें से ब्रह्मा का अवतरण होना तथा सृष्टि का निर्माण करना, वही अर्थ है और उसमें हमें सृजन की, निर्माण की ही प्रेरणा लेनी चाहिए।

शिखा और यज्ञोपवीत

श्रावणी पर्व में प्रधान रूप से ध्यान देने योग्य दो तथ्य हैं। शिखा परिष्कृत विचारणा, आदर्शवादी आस्था, उत्कृष्ट जीवन-नीति का प्रतीक है। राष्ट्रध्वज को सर्वोपरि सम्मान दिया जाता है और उसी से यह जाना भी जा सकता है कि यह आदर्शों का अनुयायी है। मानवीय मस्तिष्क पर लहराने वाली शिखा-ध्वजा उसके लिए सर्वोपरि आदर की वस्तु है; क्योंकि यह इस बात का द्योतक है कि यह मस्तिष्क आदर्शवादी, उत्कृष्ट चिंतन और श्रेष्ठ आस्थाओं का ही पोषक है तथा यज्ञोपवीत उन आदर्शों को बहिरंग जीवन में भी क्रियान्वित करने का व्रत बंध है। इसके एक-एक धागे में अगणित प्रेरणाएँ सन्निहित हैं। श्रावणी पर्व पर शिखा-सिंचन और उपवीत नवीनीकरण के जो कार्य संपन्न किए जाते हैं, उनका यही अर्थ है कि हम अपने आदर्शों को भूले नहीं हैं। शिखा-सिंचन और उपवीत नवीनीकरण ज्ञान एवं कर्म दोनों को परिष्कृत बनाए रखने का संकल्प पुनः-पुनः दोहराया जाता है।

प्रायश्चित विधान के पीछे यही भावना है कि पिछले दिनों हमसे जो अवांछनीयताएँ होती

रहीं, उन्हें अब दूर करने का संकल्प किया जा रहा है। अवांछनीयताएँ दूर करने के रूप में पिछले दिनों हुई त्रुटियों का छूटना भी आवश्यक है। अत: श्रावणी पर्व पिछले वर्ष के पुनरावलोकन, आत्मनिरीक्षण का पर्व भी है। यह पर्व विभिन्न कर्मकांडों के माध्यम से हमें अपने आदर्शों को, ज्ञान या विचार को जीवन में उतारने की व्यावहारिक प्रेरणा देता है।

आज यद्यपि रक्षाबंधन का रूप हाथ में एक लाल-पीला डोरा अथवा रेशम और कलाबत्तू आदि की बनी बढ़िया राखी बाँध देना ही रह गया, पर भारतीय इतिहास के मध्यकाल में इसका महत्त्व अधिक था और जो स्त्री जिस पुरुष के राखी बाँध देती थी, वह उसकी प्राणपण से रक्षा करता था। इस संबंध में सबसे प्रसिद्ध घटना चित्तौड़ की रानी कर्मवती की है। जब उसके राज्य पर गुजरात के बादशाह बहादुरशाह ने चढ़ाई की तो रानी ने देहली के मुगल सम्राट हुमायूँ के पास राखी भेजी और अपनी रक्षा की प्रार्थना की। हुमायूँ उसी समय सेना लेकर रवाना हो गया, पर उसके पहुँचने के पहले ही चित्तौड़ का पतन हो गया था और रानी कर्मवती अपनी सहेलियों के साथ जौहर व्रत करके आत्मोत्सर्ग कर चुकी थीं। तो भी हुमायूँ ने बदाहुरशाह पर आक्रमण करके उसको मार भगाया और रानी के पुत्र को चित्तौड़ की गद्दी पर बैठाकर 'राखी बंध भाई' के नाम को चरितार्थ किया।

वस्तुत: यह पर्व आज की परिस्थितियों में नारी शक्ति के प्रति सम्मान की अभिव्यक्ति जताने, उसकी रक्षा के लिए आगे बढ़ सकने का साहस दिखा सकने के प्रतीक रूप में मनाया जाता है। नारी का दमन, यौन अत्याचार कहीं कोई कर न पाए; इसके लिए पवित्र हृदय वाले नरपुंगवों का, वीरों का आह्वान इस दिन नारी करती है। वह कहती है—"जिसकी साँसें और पसीना परहित में बह जाए, वही वीर मेरी राखी बँधवाने को हाथ बढ़ाए।" ❐

महाभारत में कथा आती है कि तुलाधार नाम का एक वैश्य दुकानदारी करता था। गाँव में उसकी एक ही दुकान थी, इसलिए सभी लोग उसी से सामान खरीदते थे। दिनभर दुकान पर ग्राहकों की भीड़ लगी रहती थी, उसे इसी से फुरसत नहीं मिलती थी।

एक दिन कोई साधु आए और कहने लगे—"बेटा! तुमने कभी तीर्थयात्रा की है?" तुलाधार ने कहा—"नहीं महाराज! मुझे कहाँ समय मिलता है।" "तो फिर परलोक के लिए क्या कर रहे हो?"—साधु ने पूछा।

तुलाधार ने कहा—"परलोक के लिए इस लोक के लिए, चाहे जो कहिए मेरे लिए तो यही पुण्य है कि गाँववालों के लिए अनाज और अन्य आवश्यक वस्तुओं की व्यवस्था करूँ। ईमानदारी से चार पैसे कमाकर अपने परिवारवालों का भरण-पोषण करूँ। इसी में मुझे संतोष मिलता है।" साधु ने आगे कुछ नहीं कहा, सोचा ठीक ही है कि कर्त्तव्य कर्म का ईमानदारी और निष्ठापूर्वक पालन ही सच्चा धर्म है।

पितृपक्ष पर विशेष लेख

श्राद्ध-तर्पण का प्रयोजन

श्राद्ध पितरों के नाम पर किए जाते हैं और उनमें दान-पुण्य किया जाता है। इस निमित्त उनके साथ तर्पण, पिंडदान आदि कर्मकांड भी जोड़ दिए गए हैं।

वर्ष में जिस तिथि में पितरों की मृत्यु हुई हो, उस दिन भी श्राद्ध किया जाता है और आश्विन कृष्ण पक्ष में भी। चूँकि उन दिनों कन्या का सूर्य होता है। इसलिए कन्यार्क का अपभ्रंश 'कनागत' भी प्रचलित हो गया है।

पूर्वजों या गुरुजनों द्वारा किए गए उपकारों के प्रति कृतज्ञता प्रकट करना और उसकी वार्षिक ब्याज को चुकाना वार्षिक श्राद्ध है, चाहे वह मरण वाली तिथि को किया जाए या आश्विन कृष्ण पक्ष में।

उपकारी का प्रत्युपकार करना सामान्य मनुष्य धर्म है। धर्मकर्त्तव्यों के प्रति श्रद्धा बनाए रहना श्राद्ध है। अंत्येष्टि संस्कार के उपरांत जो 13 दिन बाद श्राद्ध किया जाता है, उसमें स्वावलंबी उत्तराधिकारी पूर्वजों की छोड़ी संपत्ति को उनकी धरोहर मानकर उनकी सद्गति के लिए ही परमार्थ प्रयोजनों में लगा देते हैं। मात्र असमर्थ आश्रित ही उसे निर्वाह में काम में लाते हैं।

दान का परिणाम लोक और परलोक दोनों में ही होता है। इससे यश और शांति दोनों ही मिलते हैं। सह वितरण क्रम अपनाने से समाज की सुव्यवस्था भी बनती है। पर वह दान सत्पात्रों को ही दिया जाना चाहिए और ऐसा होना चाहिए, जिससे किसी की सुविधा-संपन्नता भले ही न बढ़े, पर उनसे पिछड़ेपन से छुटकारा पाने और आगे बढ़ने, ऊँचा उठने में सहारा मिले। यश के लिए किसी पर भी पैसा लुटा देना दान नहीं, एक प्रकार का अहंकारी अज्ञान है।

आत्मिक प्रगति के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य है—'श्रद्धा।' श्रद्धा में शक्ति भी है। वह पत्थर को देवता बना देती है और मनुष्य को नर नारायण स्तर तक उठा ले जाती है। किंतु श्रद्धा मात्र चिंतन या कल्पना का नाम नहीं है। उसका प्रत्यक्ष प्रमाण भी होना चाहिए। यह उदारता, सेवा, सहायता, करुणा आदि के रूप में ही हो सकती है। इन्हें चिंतन तक सीमित न रखकर कार्यरूप में, परमार्थपरक कार्यों में ही परिणत करना होता है। यही सच्चे अर्थों में श्राद्ध है। उपकारी के प्रति कृतज्ञता का, प्रत्युपकार का भाव रखना भावना-क्षेत्र की पवित्रता एवं उत्कृष्टता का प्राणवान चिह्न है। इसके लिए धनदान आवश्यक नहीं; समय, धन, श्रम दान, भाव दान भी असमर्थता की स्थिति में इसी प्रयोजन की पूर्ति करते हैं। ❑

आधुनिक पद्धति से पानी बचाएँ

अगले दिनों समूची मानव-जाति को घोर जल संकट का सामना करना पड़ सकता है; इसके लिए बूँद-बूँद जल को बचाना एक अनिवार्य कर्त्तव्य मानकर इसे अपनाना चाहिए। गायत्री परिवार के सक्रिय कार्यकर्त्ता विभिन्न स्तरों पर इस कार्य में और पहले से अधिक ध्यान देंगे तो इस दिशा में पूरी सफलता मिलेगी। जल-संरक्षण की दिशा में कुछ शाखाओं ने अनुकरणीय कार्य किए हैं, जिनकी सर्वत्र सराहना हो रही है।

सिंचाई में जल की बरबादी रोकने के लिए शासन द्वारा भी जन-जागरण का कार्य हो रहा है, परंतु यह प्रयत्न एक व्यापक स्तर पर चले, तब ही जन-जन इसे अपनाने के लिए उत्सुक होंगे। आज ढर्रे की जिंदगी से हटकर विवेकपूर्वक सोचने-समझने और अपनाने की आवश्यकता है। देश, काल और परिस्थिति को देखकर रीति-नीति बनाने की जरूरत है, जिसके लिए परमपूज्य गुरुदेव ने वर्षों पूर्व मार्गदर्शन दिया है।

आधुनिक सिंचाई प्रणाली की विधियाँ

ड्रिप (टपक) सिंचाई प्रणाली—ड्रिप सिंचाई विधि आधुनिकतम सिंचाई विधियों में से एक है। ड्रिप सिंचाई से 30 प्रतिशत तक उर्वरक की बचत तथा 70 प्रतिशत जल की बचत होती है तथा उपज में 100 प्रतिशत तक वृद्धि हो सकती है। ड्रिप विधि से फसल की सिंचाई में जल की गति धीमी तथा निरंतर पहुँचाने की व्यवस्था होती है। रासायनिक खादों को पानी में घोलकर ड्रिप पद्धति द्वारा पौधों तक पहुँचाया जा सकता है। इसके उपयोग से फसल का उत्पादन और गुणवत्ता में वृद्धि होती है। यह विधि कम वर्षा वाले क्षेत्रों में वरदानस्वरूप ही है। साथ ही भारी एवं काली मिट्टी से लेकर रेतीली मिट्टी तक में इसका उपयोग सफल एवं फायदेमंद है।

ड्रिप प्रणाली से पंप के द्वारा जल-स्रोत से पानी आगे बढ़ता है और फिल्टर के द्वारा छनकर मुख्य पाइप में जाता है, फिर आगे मुख्य पाइप लाइन एवं लेटरल के द्वारा पूरे खेत में वितरित होता है। जब पानी लेटरल में बहता है, तब ड्रिपर के माध्यम से पौधों की जड़ों के पास बूँद-बूँद करके गिरता है। यह विधि मृदा के प्रकार, खेत के ढाल, जल के स्रोत और किसान की दक्षता के अनुसार अधिकतर फसलों के लिए अपनाई जा सकती है।

टपक सिंचाई (ड्रिप पद्धति) के लाभ—

उत्पादकता और गुणवत्ता में वृद्धि, जल की बचत, हर प्रकार की भूमि का उपयोग, खाद की बचत एवं कम खरपतवार, कीट एवं रोगों का कम प्रभाव, ग्रीन हाउस में ड्रिप सिंचाई का प्रयोग सुगमतापूर्वक किया जा सकता है।

अपेक्षाकृत बड़े क्षेत्र की सिंचाई एक ही समय में तथा समरूपता से की जा सकती है। सिंचाई जल वितरण एवं वाष्पीकरण में हवा का प्रभाव नहीं होता है, खेत के कोनों व सीमा में सिंचाई जल का नुकसान नहीं होता है।

टपक सिंचाई प्रणाली के प्रकार

ऑनलाइन—यह प्रणाली सामान्यतः दूर एवं अधिक अंतराल वाले फलों के बगीचों में उपयोग की जाती है। इसमें पौधों की कतारों के साथ बिछाए जाने वाली लैटरल पाइप में पौधों की दूरी के अनुसार छेद करके ड्रिपर लगाया जाता है। जैसे—आम, चीकू, केला, पपीता आदि।

इनलाइन—इस प्रणाली का उपयोग सामान्यतः पास-पास बोई जाने वाली फसलों जैसे—सब्जी, फूल आदि में किया जाता है। इस प्रणाली की लैटरस नली में ड्रिपर को निर्माण के समय निश्चित दूरी पर अंदर की तरफ लगा देते हैं। इनलाइन ड्रिप लेटरस को जमीन के अंदर भी लगाया जा सकता है, जिसे इन सतही ड्रिप सिंचाई प्रणाली कहते हैं। इस प्रणाली में केवल उनकी सतह नम होती है और मृदा की उपरी सतह सूखी रखती है, जिससे वाष्पोत्सर्जन होने वाली जल-हानि कम होती है। मृदा की ऊपरी सतह सूखी रहने के कारण खरपतवारों की वृद्धि भी नहीं होती है।

माइक्रो स्प्रिंकलर्स—इस विधि में सभी अवयव ड्रिप प्रणाली की तरह ही होते हैं, केवल लैटरल पाइप में ड्रिपर की जगह एक निश्चित दूरी पर माइक्रो स्प्रिंकलर्स नोजल लगा दिए जाते हैं। यह प्रणाली पास-पास बोई जाने वाली फसलें जैसे—पालक, मटर, प्याज आदि के लिए उपयुक्त है। इस पद्धति में पानी फुहारा की तरह निकलता है, जिससे एक स्प्रिंकलर से जमीन का अधिक क्षेत्र सिंचित किया जा सकता है। ❐

अरस्तू के पास सिकंदर पढ़ा करता था, न केवल पुस्तकें, वरन आत्मिक प्रगति एवं व्यावहारिक जीवन का नीति विज्ञान भी।

सिकंदर एक युवती के फेर में पड़ गया और पढ़ने आने का समय वह उसी पर खरच करने लगा। सिकंदर के सुधार के लिए अरस्तू उस युवती के घर मौका पाकर जा पहुँचे और अपनी साठ-गाँठ जमाने लगे। युवती मन-ही-मन बुड्ढे की शौकीनी पर हँसी और कहा—"आज दिन भर के लिए आप मेरे घोड़ा बन जाइए, दिन भर सवारी करूँगी। रात को आपकी इच्छा पूरी कर दूँगी। अरस्तू घोड़ा बन गए और युवती उन्हें हाँकती हुए कोड़े जमाने लगी।"

सिकंदर कोने में छिपे यह सब देख रहे थे। अरस्तू ने अब अपने अनजानपन को छोड़कर कहा—"बेवकूफ जिस रास्ते पर चलने से मेरे जैसे समझदार की यह दुर्गति हो रही है; उस पर चलने से तुझ जैसे कम अक्ल को क्या भुगतना पड़ सकता है ? जरा सोच तो। सिकंदर की आँखें खुल गईं, उसने अपना रास्ता बदल दिया। इसी ने उसे सिकंदर महान बनाया।

अंजीर के औषधीय प्रयोग

अंजीर रक्त को क्षारीयता प्रदान करता है। प्राकृतिक चिकित्साजगत् में क्षारधर्मी एवं अत्यंत पाचक खाद्य जो उपचार अवधि में प्रयुक्त होते हैं, उनमें किशमिश, मुनक्का, अंजीर और खजूर प्रमुख हैं। रक्त की शुद्धि करने तथा नया खून बनाने में इनकी बड़ी भूमिका है। ड्राईफ्रूट के रूप में यह सर्वत्र बाजारों में उपलब्ध होता है। अंजीर के वृक्ष ईरान, अफ्रीका, तुर्किस्तान, अफगानिस्तान आदि उष्ण प्रदेशों में अधिक होते हैं। उत्तराखंड के पहाड़ी स्थानों पर छोटे आकार के अंजीर होते हैं। जिस जमीन में चूने का अंश अधिक होता है, वहाँ अंजीर अच्छी तरह फलता है। कच्चे फलों की सब्जी भी बनाई जाती है। इसके फल गूलर के फलों की तरह दिखाई देते हैं। पके फलों को काटकर, सुखाकर विक्रय करते हैं।

अंजीर के गुण-दोष

कफनाशक, रक्तशोधक, रक्तपित्तनाशक, शीतल, पौष्टिक, रेचक, विषनाशक, सूजन में लाभदायक, पथरी, लकवा, नकसीर, प्यास, यकृत और तिल्ली की बीमारी तथा सीने का दरद दूर करता है। श्वेतकुष्ठ, (ल्यूकोडर्मा में भी अंजीर उपयोगी है।) खाँसी, बवासीर, गठिया तथा प्रदर में भी यह लाभ पहुँचाता है। यह एक क्षारीय खाद्य होने से अत्यंत स्वास्थ्यकारक, पाचक तथा कब्जनिवारक है।

घरेलू उपयोग

बवासीर में—4 नग शुष्क अंजीर शाम को चौगुने पानी में भिगो देना चाहिए, प्रातः उसी पानी को पी लेना चाहिए तथा अंजीर खा लेना चाहिए। इसी प्रकार प्रातः 4 नग अंजीर पानी में भिगो दें तथा सायंकाल अंजीर का पानी भी पी लें तथा अंजीर का सेवन कर लें। इस प्रकार 15-20 दिनों तक यह क्रम बनाए रखिए। पथ्य-परहेज का पालन करने से ही रोग-निवृत्ति होती है। खूनी बवासीर में बड़ा लाभप्रद प्रयोग है। मिरच, गरम मसालों तथा गरम खाद्य एवं गरम पेय पदार्थों से बचें।

ल्यूकोडर्मा (श्वेतकुष्ठ) में—अंजीर के पत्तों का रस त्वचा पर नित्य लेप करने से रोग का बढ़ना बंद हो जाता है तथा सफेद त्वचा का रंग सामान्य होने लगता है। सूर्योदय से पूर्व नित्य कपास के पत्तों का रस लेप करने से भी लाभ होता है। उपचार लंबे समय तक चलाएँ।

रक्त के जमाव में—अंजीर की लकड़ियों को जलाकर भस्म बना लें तथा पानी में 7 बार घोलकर भस्म पानी के अंदर बैठ जाने दें। पानी निथार दें। यह निथरा हुआ पानी एक कप मात्रा

सौम्य होने का अर्थ स्वयं से व दूसरों से संतुष्ट होना।

में प्रतिदिन पिलाएँ। कुछ दिनों तक यह क्रम चलाने से रक्त का जमाव बिखर जाता है।

गाँठ एवं फोड़े में—हरे अंजीर या सूखे अंजीर को पानी में पीसकर तथा औटाकर सहने योग्य गरम लेप करने से गाँठों एवं फोड़े की सूजन बिखर जाती है।

अस्थमा में—अस्थमा के रोगी को (1) नित्य सुबह-शाम 4-4 अंजीर का सेवन करना चाहिए। अंजीर एवं गोरखइमली (सफेद इमली) का चूर्ण समान मात्रा में मिलाकर रखें। नित्य 5 ग्राम की मात्रा प्रात: एवं सायंकाल खाने से दमा में लाभ होता है।

(2) 4-5 अंजीर उबालकर काढ़ा बनाकर नित्य पिलाने से लाभ होता है। दमा के रोगी को चिकनाई तथा दालें एवं तले खाद्यों से परहेज रखना चाहिए। चोकरयुक्त आटे की रोटी व हरी सब्जी का सेवन करना चाहिए।

कब्ज में—कब्ज एक भयंकर व्याधि है। मलावरोध के सड़ाँध के कारण विकार खून में जाने से रक्त-परिसंचरण में बाधा होती है। धमनियाँ फूलने लगती हैं। गाँठ-सी पड़ जाती हैं। मस्तिष्क, हृदय, आमाशय, त्वचा एवं नेत्र की बीमारियाँ पैदा होती हैं। युवावस्था में ही वृद्धत्व के दोष पैदा हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में अंजीर का सेवन बड़ा लाभप्रद होता है। मल की शुष्कता को मिटाता है। मल को तर करता है। आँतों को बल देता है। कब्ज-दोष का निवारण करता है। रक्त की शुद्धि और रक्ताभिसरण में अंजीर सहायता करता है। नियमित रूप से अंजीर का सेवन करना चाहिए। अंजीर को 12 घंटे तक पानी में भिगोकर खाना अधिक गुणकारी माना गया है।

रक्ताल्पता में—3-4 अंजीर को 250 ग्राम गोदुग्ध में पकाकर या अंजीर को पानी में उबालकर काढ़ा बनाकर पीने से नया रक्त बनने लगता है तथा शारीरिक कमजोरी दूर होती है।

मूत्रकृच्छ्र (डिशयूरिया) में—एक नग अंजीर के साथ 3 ग्राम कलमीशोरा मिलाकर खाने से लाभ होता है। पानी पर्याप्त मात्रा में पीना चाहिए।

दाँत दरद में—अंजीर के पेड़ की डाली या पत्ता तोड़ने पर दूध निकलता है। थोड़ी-सी रूई पर दूध टपका लें तथा अंजीर के दूध से तर की हुई रूई को दरद वाले दाँतों के नीचे दबाने से दंत-कृमि नष्ट हो जाते हैं।

गले एवं जीभ की शोथ—5-6 शुष्क अंजीरों को पानी में औटाकर, काढ़ा बनाकर पीना एवं गरारे करने से लाभ होता है।

शीतला या चेचक में—बच्चों को शीतला निकलती है, उनके शरीर में बहुत दिनों तक गरमी की विकृति रहती है। ऐसी दशा में ताजे अंजीर का रस निकालकर, मिसरी मिलाकर पिलाना चाहिए।

जल प्रमेह में—यदि पेशाब स्वच्छ पानी जैसा शीतल, सफेद झलक वाला तथा अधिक मात्रा में जल्दी-जल्दी आता हो, कंठ सूखता हो तो सवेरे 4 अंजीर खाकर 10 ग्राम तिल (भुने हुए) चबाकर खाने से लाभ होता है। जल प्रमेह दूर होता है।

नकसीर में—अंजीर 2 नग तथा मिसरी 10 ग्राम दोनों को 100 ग्राम पानी में पीसकर प्रातः-सायं शरबत बनाकर पीने से लाभ होता है।

रक्तशुद्धि के लिए—अंजीर 4 नग और मुनक्का 10 नग को 250 ग्राम गोदुग्ध डालकर उबालना चाहिए। एक बार उफान आने पर उस दूध को पीने से रक्त की शुद्धि होती है।

खाँसी में—अंजीर को भुने जीरे के साथ सेवन करने से लाभ होता है।

जठराग्नि मंद पड़ने पर—पाचन प्रणाली मंद पड़ जाने पर अंजीर का सेवन करना चाहिए। उदर विकारों में 4-5 अंजीर प्रतिदिन 12 घंटे पानी में भिगोकर सुबह-शाम लंबे समय तक सेवन करने से लाभ होता है।

संधिवात-गठिया में—सूखे अंजीर अत्यंत रक्तशोधक, क्षारधर्मी एवं पाचक होने के कारण हर प्रकार की वात-व्याधियों में अत्यंत लाभकर हैं। संधिवात व गठिया के रोगी 10 मुनक्का, 5 अंजीर तथा 5 अखरोट-गिरी 12 घंटे तक एक गिलास पानी में भिगोकर खाएँ। जिस पानी में उपरोक्त खाद्य भिगोए हैं, उस पानी को पी लेना चाहिए तथा भिगोए हुए मुनक्का, अंजीर तथा अखरोट प्रातः नाश्ते में सेवन कर लेना चाहिए। यह प्रयोग लगातार छह माह तक करना चाहिए। सहायक उपचार क्रम भी अपनाना चाहिए। जैसे—प्रतिदिन तेल-मालिश तथा सुबह-शाम अनिवार्य रूप से क्षमता भर टहलना, अंकुरित मेथी, अंकुरित चना या मूँग तथा लौकी, खीरा, ककड़ी, तरबूज, खरबूजा, संतरा, मौसमी, पपीता, सेव, अनार, अमरूद आदि मौसम के अनुसार उपलब्ध फल-सब्जियों के ताजे रस, सूप एवं सलाद का प्रयोग भी रक्त-निर्माण, जोड़ों की चिकनाई पैदा करने में सहायक होगा। गाय का दूध या सोयाबीन से बनाए दूध एवं दही का प्रयोग गठिया के रोगी के लिए लाभप्रद होता है।

अनिवार्य रूप से सभी प्रकार के बासे खाद्य पदार्थ, अचार, नमकीन, तले खाद्य पदार्थ, चीनी से बनी मिठाइयों से परहेज रखें। मिल की चीनी की जगह गुड़ या देशी खाँड़ का प्रयोग करें। मिल की सफेद चीनी में कोई खनिज लवण (मिनरल्स) तथा विटामिन्स नहीं होते, जबकि गुड़ में लगभग सभी पोषक तत्त्व होते हैं। चीनी खाने से कैल्सियम का क्षरण होने से हड्डियाँ कमजोर होती हैं। ❐

सद्गुणों की सेवा-साधना की कीर्ति अनायास ही फैलती है। कपूर और कस्तूरी की तरह वह अपने सारे क्षेत्र को सुवासित करती है। इसके लिए उन्हें किसी की दलाली देने की मनुहार करने की आवश्यकता नहीं होती।

समर्पण भाव से कर्म करें

कर्म और कर्मफल में अपना अधिकार मानना ही आसक्ति कही गई है। कर्म में कर्त्तापन का भाव रखना और उसके फल में अपना अधिकार मानना ही आसक्ति है। आसक्तिवान व्यक्ति जल्दी ही परिस्थितियों तथा परिणामों से प्रभावित हो उठता है, किंतु कर्म और उसके अच्छे-बुरे, अनुकूल-प्रतिकूल परिणामों का बोझ अपने ऊपर न लेने वाला किन्हीं विषमताओं से प्रभावित नहीं होता। फलतः उसका सुख, चैन, शांति और संतोष अक्षुण्ण बना रहता है। न तो वह कभी निराश होता है और न हतोत्साहित। वह जीवन-पथ पर निर्द्वंद्व भाव और अप्रतिहत गति से बढ़ता चला जाता है।

कर्म और कर्मफल में आसक्ति रहने से मनुष्य को अनुकूल-प्रतिकूल स्थितियों से गुजरना पड़ता है और इसी के अनुसार आशा-निराशा का भी सामना करना पड़ता है। इससे मनुष्य की शक्तियों का काफी क्षय होता है। अपने कर्म और कर्मफल को ईश्वर पर छोड़ देने से निराशा, चिंता, असंतोष का कोई स्थान नहीं रह जाता। तत्त्ववेत्ता अरस्तू ने लिखा है—"अपने कर्मों और उसके फल को ईश्वर पर छोड़ देने से आशावाद अजर-अमर बनता है। ईश्वर सभी तरह आशावाद का केंद्र है। आशावाद और ईश्वरवाद एक ही हैं।" ईश्वर का अवलंबन लेने पर, अपने कर्म और कर्मफल का समर्पण ईश्वर को कर देने से सफलता-असफलता मनुष्य को प्रभावित नहीं करतीं। आशावाद के सहारे वह दोनों में संतुलित रहकर कर्मपथ पर अग्रसर होता रहता है।

आज भी लोग पचासों मील लंबी-चौड़ी नदियाँ और उपसागरों को तैरकर पार करते रहते हैं। मनुष्य का स्वाभाविक बल इतना कहाँ कि वह उस कठिन संतरण को केवल तैरने की कला के आधार पर पूरा कर सके। यह उसका अदम्य ईश्वरविश्वास ही होता है, जो उसे थककर भी थकने और हारकर भी हारने नहीं देता; एक महान नौका की तरह से जाकर पार लगा देता है। निश्चय ही ईश्वर के प्रति अटूट विश्वास एक सुदृढ़ नौका के समान ही है। यदि मनुष्यों के पास ईश्वरविश्वास न हो तो वे संसार की लाखों आपत्तियों, विपत्तियों, उलझनों और समस्याओं से कैसे पार पाएँ? अनास्था का भाव रहने पर ही मनुष्य का पुरुषार्थ मर जाता है; पराक्रम तिरोधान हो जाता है; आशा और उत्साह के दीप बुझ जाते हैं; जीवन में भय और आशंकाओं का घटाटोप अंधकार छा जाता है। □

उदारता हर इनसान का फर्ज है। इसलिए किसी के साथ किए गए उदार व्यवहार को मात्र कर्त्तव्यपालन के और कुछ नहीं समझना चाहिए। बार-बार तो ऐसे ही प्रसंगों का जिक्र किया जा सकता है, जिनमें दूसरों ने अपने साथ कोई असाधारण भलाई की हो।

शिष्टता मानवता का लक्षण

शिष्टाचार व्यवहार की वह रीति-नीति है, जिसमें व्यक्ति और समाज की आंतरिक सभ्यता और संस्कृति के दर्शन होते हैं। परस्पर बातचीत के संबोधन, व्यवहार से लेकर दूसरों की सेवा, आदरभाव, सम्मान सभी शिष्टाचार के अंतर्गत आते हैं। शिष्टाचार व्यक्ति के आचरण और व्यवहार का एक नैतिक मापदंड है, जिस पर सभ्यता और संस्कृति के भवन का निर्माण होता है। एकदूसरे के प्रति सद्भावना, सहानुभूति, सहयोग शिष्टाचार के मूल आधार हैं। इन मूल भावनाओं से प्रेरित होकर दूसरों के प्रति नम्र, विनयशील, संयत आदरपूर्ण उदार आचरण ही शिष्टाचार है।

बहुत-से लोग ऊँची शिक्षा और अच्छे वस्त्रों को ही शिष्टाचार का मुख्य अंग समझ बैठने की भूल कर बैठते हैं। शिक्षित और कीमती बढ़िया पोशाक पहनने वाला व्यक्ति भी अशिष्ट हो सकता है और निपट, अनपढ़ देहाती नितांत शिष्ट। शिष्टता के लिए जिस आचरण, व्यवहार और आदतों की आवश्यकता होती है, जरूरी नहीं कि वे शिक्षित होने से ही आ सकें। इसी प्रकार वस्त्राभूषण पहनकर शिष्ट आचरण की आशा नहीं की जा सकती। शिष्टाचार का सद्गुण अभ्यास, आचरण और वातावरण के द्वारा प्राप्त किया जाना संभव है। इसके लिए संवेदनशील और कोमल हृदय की आवश्यकता है।

शिष्टता मानवता का प्रमुख लक्षण है। पशु-पक्षियों को तो इसका ज्ञान नहीं होता; क्योंकि उनका जीवन पूर्ण प्राकृतिक प्रेरणाओं पर निर्भर होता है। उनकी दिनचर्या आहार-विहार सब कुछ भिन्न है। बुद्धि, विवेक से शून्य प्राणियों में भी प्रेम, अनुराग जैसी कोई भावना नहीं होती। वे एकदूसरे से इतने उदासीन रहते हैं कि उन्हें सिवाय अपने आखेट करने और खाने से ही मतलब रहता है। दिखने में वे सौम्य आकृति भले ही लगते हैं, किंतु उनका आचरण पशुवत् ही होता है। शिष्टता, मिलनसारिता जैसे गुण उनमें नहीं होते।

सभ्यता, शिष्टता के आचरण-व्यवहार का ज्ञान हमें वस्तुतः पूर्वजों से विरासत में मिला है। शिष्टाचार की भावना और नियमों का विवेचन करने से यही प्रतीत होता है। इसका अभ्यास बाल्यकाल से ही कराया जाना चाहिए। वे भूल करते हैं, जो बालकों को शिष्ट आचरण की शिक्षा आरंभ से नहीं देते। कुछ बड़े होने पर शिष्टाचार के नियमों की जानकारी देने का दायित्व शिक्षकों पर आ जाता है। यों शिष्टाचार के नियमों की जानकारी पाठ्य पुस्तकों में भी दी गई होती है; किंतु अध्यापक, अभिभावक

धन के रक्षक बनें, स्वामी नहीं — *महर्षि अरविंद*

इस दायित्व का अभ्यास स्वयं के आचरण से कराते हैं तो ही जीवन में उतरता है।

वाणी संबंधी शिष्टता में सावधानी, सतर्कता बरतना बहुत कम लोगों को आता है। अभिवादन के सामान्य व्यवहार से भी लोग बचते हैं और बोलते समय आदरसूचक शब्दों की भी कंजूसी करते हैं। जबकि नमस्कार, प्रणाम करने से अपना कुछ घटता नहीं और सामने वालों को लगता है उन्हें सम्मान दिया जा रहा है। आत्मप्रशंसा और परनिंदा ऐसे दोष हैं, जो व्यक्ति का घटियापन जाहिर करते हैं। दूसरों के बीच में बात काटकर बोल पड़ना, वार्त्तालाप में गाली-गलोज करना, अपशब्दों का प्रयोग भी अशिष्टता है। बात को संक्षेप, सारगर्भित कहना, क्रोधावेश में न आना, सभ्यता और शिष्टता की निशानी है। इसके विपरीत अधिक बोलना, असत्य बोलना, चुगली करना, चापलूसी करना दुर्गुण भी है और अशिष्टता भी।

शिष्टाचार मनुष्य जीवन का दर्पण है, जिसमें उसके व्यक्तित्व का स्वरूप दिखाई देता है। शिष्टाचार के माध्यम से ही मनुष्य का प्रथम परिचय समाज को मिलता है। अच्छा या बुरा दूसरों पर जो भी प्रभाव पड़ता है, वह हमारे उस व्यवहार पर निर्भर करता है, जो हम दूसरों से करते हैं। ❐

एक धनी व्यक्ति ने सुन रखा था कि भागवत पुराण सुनने से मुक्ति हो जाती है। राजा परीक्षित की इसी से मुक्ति हुई थी। उसने एक पंडित जी को भागवत की कथा सुनाने को कहा। पूरी कथा हो गई, पर उस व्यक्ति के मुक्ति के कोई लक्षण नजर न आए। उसने पंडित जी से इसका कारण पूछा। पंडित जी ने लालचवश उत्तर दिया—"यह कलियुग है। इसमें चौथाई पुण्य होता है। चार बार कथा सुनो तो एक कथा के बराबर पुण्य होता है।" धनी ने तीन कथा की दक्षिणा पेशगी दे दी और कथाएँ आरंभ करने को कहा। वे तीनों भी पूरी हो गईं, पर मुक्ति का कोई लक्षण तो भी प्रतीत न हुआ। इस पर कथा कहने और सुनने वाले में कहा-सुनी होने लगी।

विवाद एक उच्चकोटि के महात्मा के पास पहुँचा। उसने दोनों को समझाया कि केवल बाह्य क्रिया से नहीं, आंतरिक स्थिति के आधार पर पुण्यफल मिलता है। राजा परीक्षित मृत्यु को निश्चित जान संसार से वैराग्य लेकर आत्मकल्याण में मन लगाकर कथा सुन रहे थे। वीतराग शुकदेव जी भी पूर्ण निर्लोभ होकर परमार्थ की दृष्टि से कथा सुना रहे थे। दोनों की अंतःस्थिति ऊँची थी, इसलिए उन्हें वैसा ही फल मिला।

आत्मकल्याण के लिए बाह्य कर्मकांड से ही काम नहीं चलता। उसके लिए उच्च भावनाएँ होना भी आवश्यक हैं।

आत्मीय अनुरोध

गुरुदेव के विचारों का सम्मान करें

(स्वतंत्रता-दिवस के परिप्रेक्ष्य में)

वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पं० श्रीराम शर्मा आचार्य जी को हम एक नैष्ठिक गायत्रीसाधक, विचारक, यज्ञ-विद्या के उद्धारक, युगप्रवर्तक, कुशल संगठक के रूप में जानते हैं। उनके स्वतंत्रता सेनानी के रूप में यदि कुछ जानते भी हैं तो वह कम है। आइए उनके इस स्वरूप को जानने का प्रयास करें।

बचपन से ही सर्वसमाज के प्रति सेवाभाव

उनका जन्म ब्राह्मण परिवार में हुआ था जो एक प्रतिष्ठित श्रीमद्भागवताचार्य के रूप में ख्यातिप्राप्त था, पर बालक श्रीराम किसी भी प्रकार के परंपरागत अहंभाव से काफी ऊपर थे। वे कबीर के कथन "जाति-पाँत पूछे नहिं कोई, हरि को भजै सो हरि का होई" से प्रभावित थे।

उन्होंने आँवलखेड़ा में बुनताघर खोलकर युवाओं को स्वावलंबी बनने की राह दिखाई। सामाजिक विरोध से बेपरवाह उन्होंने एक वृद्ध हरिजन महिला 'छपको' का उपचार (उसके स्वस्थ होने तक) स्वयं किया। हरिजन सेवा और स्वदेशी आंदोलन की प्रेरणा उन्हें बापू से मिली। घर वाले नहीं चाहते थे कि वे गांधी जी के कार्यक्रमों में भाग लें, एक तरह से उन पर पहरा बिठा दिया था। सुबह वे शौच-क्रिया के लिए घर से बाहर निकले तो आगरा के कांग्रेस स्वयंसेवक भरती दफ्तर पहुँचकर अपना नाम दर्ज करा दिया। उनकी अंत:प्रेरणा इतनी जबरदस्त थी कि वे किसी भी प्रतिरोध के सामने कभी नहीं झुके। संभवत: इन्हीं कारणों से लोग उन्हें 'मत्त' कहने लगे।

आगरा में स्वतंत्रता संग्राम

1857 के गदर से ही यहाँ स्वतंत्रता संग्राम शुरू हो गया था, जब क्रांतिकारियों ने अँगरेजों के ठिकानों पर आक्रमण के लिए 30 कि. मी. की लंबी यात्रा की। फतेहपुर सीकरी मार्ग पर स्थित ग्राम सुचेता में भयंकर युद्ध हुआ।1919 में रौलट एक्ट लागू होते ही लोकमान्य तिलक, हृदयनाथ कुंजरू, महात्मा गांधी आदि नेताओं ने इस क्षेत्र में क्रांतिकारी हवा को भड़काने का काम किया। 1923-24 में श्रीकृष्ण दत्त पालीवाल द्वारा 'दैनिक सैनिक' समाचारपत्र के प्रकाशन से कांग्रेस का संगठन और सुदृढ़ हुआ।

गायत्रीसाधक श्रीराम जी के हृदय में आजादी की ज्वाला तभी भड़क उठी, जब गांधी जी ने देशव्यापी दौरा किया और युवाओं में गुलामी की जंजीरें मजबूत करने वाली अँगरेजी शिक्षापद्धति के प्रति विद्रोह की आग भड़काई। इस अपील की व्यापक प्रतिक्रिया हुई, आचार्य जी भला कैसे अछूते रहते? वे तब तक प्राइमरी ही उत्तीर्ण कर सके थे; उन्होंने स्कूली पढ़ाई से मुँह मोड़ लिया। घर पर ही संस्कृत भाषा, भारतीय आर्षग्रंथ, महापुरुषों की जीवनियाँ और राजनेताओं की वक्तृताओं को पढ़ने में रुचि लेने लगे। उल्लेखनीय है कि रवींद्रनाथ टैगोर ने भी किसी विद्यालय में शिक्षा नहीं पाई; उनका ज्ञान भी स्व-उपार्जित था। गुरुदेव की विद्या भी इसी कोटि की थी।

गुरुदेव की स्वाधीनता संग्राम में सक्रियता

'दैनिक सैनिक' से जुड़कर युवा श्रीराम ने कंपोजिंग, प्रूफ रीडिंग और लेखन में दक्षता

प्राप्त की। निष्ठा के कारण पालीवाल जी के विश्वस्त बने। उनके क्रांतिकारी गीत 'दैनिक सैनिक', गणेशशंकर विद्यार्थी द्वारा कानपुर से संपादित 'विद्यार्थी', कोलकाता के 'दैनिक विश्वामित्र', 'किस्मत' और 'मस्ताना' में छपते रहे। इन गीतों ने जहाँ स्वतंत्रता सेनानियों का मनोबल बढ़ाया, क्रांति की ज्वाला भी भड़काई।

एक बार श्री बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आगरा आए तो उन्होंने पालीवाल जी से कहा—"मैं कांग्रेसी नेताओं से तो मिलता ही रहता हूँ, ऐसे किसी स्वयंसेवक से मिलवाओ, जिस पर गांधी जी की छाप हो।" उन्हें युवा श्रीराम से मिलवाया गया। वे प्रसन्न होकर बोले—"बेटा! आज देश को तुम जैसे स्वयंसेवकों की जरूरत है।" उनके इस कथन को गुरुदेव ने साबरमती आश्रम जाकर और अधिक पुष्ट किया।

परम विश्वस्त कार्यकर्त्ता

उन दिनों श्री बी.वी. केसकर आगरा के कोषाध्यक्ष थे। चंदा सँभालने की जिम्मेदारी उन पर थी। जब अँगरेजों ने कांग्रेस को गैरकानूनी घोषित कर दिया, तब बड़ी संख्या में जेल जाने वाले सत्याग्रही भरती करने पड़े। उनके घरवालों की भोजन-व्यवस्था आदि के लिए बिरला जी जैसे श्रीसंपन्न लोगों से गुप्त रूप से आर्थिक सहायता आती थी, जिसे गुप्त रखना पड़ता था, जिनके घरों की कुर्की हो जाती थी, उन्हें आर्थिक सहायता पहुँचानी थी। पालीवाल जी के परामर्श से श्री केसकर ने इस कार्य की जिम्मेदारी श्रीराम 'मत्त' को दी, जिसे उन्होंने निष्ठापूर्वक निभाया।

पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव

21 दिसंबर, 1929 की आधी रात को रावी तट पर कांग्रेस के ऐतिहासिक अधिवेशन में पूर्ण स्वराज्य का प्रस्ताव पारित हुआ, तो तालियों की गड़गड़ाहट में लोग नाच उठे। इस अधिवेशन में 18वर्षीय युवा श्रीराम भी थे। निश्चित हुआ कि 26 जनवरी, 1930 को देश भर में पूर्ण स्वराज्य दिवस धूमधाम से मनाया जाए। गुरुदेव के लौटने पर आगरा की चुंगी कचहरी के सामने और रावतपाड़ा में जनसभाएँ हुईं और यह चिनगारी लेकर आँवलखेड़ा में घर-घर संपर्क द्वारा जोश पैदा किया। इस कार्यक्रम को देखकर जगन प्रसाद रावत जी भी उछल पड़े और उन्होंने आचार्य जी को छाती से लगा लिया।

आगरा मुख्यालय से 40 कि. मी. दूर जरार सत्याग्रह का मुख्य केंद्र बन चुका था। उसे कांग्रेस की छावनी कहा जाता था, यहाँ के जमींदार सूरजपाल अँगरेजों के खैरख्वाह थे। कलेक्टर विलियम्सन ने उन्हें चेतावनी दी कि यदि उनके गाँव से छावनी नहीं हटी तो उनकी जमींदारी छीन ली जाएगी। सूरजपाल के गुंडों ने वहाँ सत्याग्रहियों पर जुल्म ढाने शुरू किए, पर वे टस-से-मस नहीं हुए। आचार्य जी अन्य नेताओं के साथ सत्याग्रह और संघर्ष में जुटे रहे। एक दिन कलेक्टर विलियम्सन और जमींदार सूरजपाल के गुंडों ने सत्याग्रहियों की खूब पिटाई की। गुरुदेव बेहोश होकर कीचड़ के गड्ढे में गिर गए। हाथ में झंडा था, जिसे पुलिस छीनना चाहती थी। बेहोशी की हालत में ही पुलिस उनसे इसे छीन सकी, जो फटी हालत में मिला; क्योंकि उनने इसे अपने दाँतों के बीच दबा रखा था।

आगामी स्वतंत्रता दिवस पर हम सभी को संकल्प लेना चाहिए कि अपने राष्ट्र का मस्तक सदा ऊँचा रखने के लिए हम सभी देशवासी अपने प्राणों की आहुति तक देने के लिए सदा कटिबद्ध रहेंगे। यही गुरुदेव के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी। ❑

ज्ञातव्य

मातृशक्ति सम्मेलन (दिनांक : 1, 2, 3, 4 सितंबर, 2024)

(कार्यक्रम प्रातःकाल से ही प्रारंभ होंगे, अतः एक दिन पूर्व पधारें)

पूज्य गुरुदेव एवं वंदनीया माताजी ने नारी शक्ति के उत्कर्ष हेतु अथक पुरुषार्थ किया है। उनके इस कार्य को आगे बढ़ाने हेतु गायत्री तपोभूमि के पावन परिसर में आगामी 1, 2, 3, 4 सितंबर, 2024 की तिथियों में चार दिवसीय **'मातृशक्ति सम्मेलन'** आयोजित किया जा रहा है, जिसमें नारी उत्थान के प्रयत्नों-कार्यक्रमों पर विशेष परिचर्चा होगी एवं व्यावहारिक मार्गदर्शन दिया जाएगा। इस सम्मेलन में भागीदार बनने हेतु मातृशक्ति का आह्वान किया जा रहा है। इच्छुक बहनें अपना नाम, पता, फोन, व्यवसाय, पद तथा अन्य विवरण एवं साथ में आने वालों की संख्या आदि की जानकारी यहाँ भेजें और गायत्री तपोभूमि से संपर्क कर स्वीकृति प्राप्त कर लें, ताकि आवास की उचित व्यवस्था हो सके।

आवश्यकता है

मिशन को समर्पित, अनुभवी, योग्य कार्यकर्त्ताओं की—

1. **चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट**
2. **एम.बी.ए. (फाइनेन्स)**
3. **प्राकृतिक चिकित्सक (B.N.Y.S.)**
4. **एलोपैथी चिकित्सक (M.B.B.S.)**
5. **बी.टेक/एम.सी.ए. कंप्यूटर प्रवीणता**
6. **डेयरी मैनेजमैंट एम.बी.ए./डिग्री/डिप्लोमा**
7. **होटल मैनेजमैंट डिग्री/डिप्लोमा**
8. **प्रिंटिंग टेक्नोलॉजी में डिग्री/डिप्लोमा**
9. **गायन-वादन में निपुण, कर्मकांड कराने में समर्थ कार्यकर्त्ता**
10. **बीटेक/बी.ई. सिविल**
11. **हिंदी साहित्य/भाषा विज्ञान/संस्कृत के अनुभवी जानकार**

शैक्षणिक योग्यता, जन्मदिन, इन्टर्नशिप अनुभव, कार्यों का अनुभव, पारिवारिक विवरण, मिशन से कब से, किस रूप में जुड़े हैं व न्यूनतम अपेक्षित मानदेय, प्रमाणपत्रों तथा एक फोटोसहित आवेदन करें।

शिशु का ऐसे ध्यान रखें

कितने ही जंगल ऐसे होते हैं, जिनमें जहाँ-तहाँ खाली पड़ी जमीन में झाड़-झंखाड़ उग आते हैं; क्योंकि वह उपेक्षित जमीन थी। परंतु किसी स्थान पर कुशल माली ने पेड़-पौधे व्यवस्थित ढंग से लगाए, देख-रेख की हो तो वह देखने में सुंदर लगता है, आँखों को सुख मिलता है। माली की सूझ-बूझ की प्रशंसा होती है। माँ को भी एक कुशल माली की भूमिका निभानी होती है; अन्यथा संतान का शारीरिक तथा मानसिक विकास जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं हो पाता।

थोड़ी-सी सामान्य बातों की जानकारी माँ बनने से पूर्व करा दी जाए, तो उसके सामने जो नया उत्तरदायित्व आता है, वह सही ढंग से निभा सकती है। अनगढ़ लोगों का संतानोत्पादन अनगढ़ ही होता है। इसे ऊबड़-खाबड़ के झाड़-झंखाड़ों की उपमा दी जा सकती है। निरुद्देश्य का प्रतिफल इससे अच्छा हो भी क्या सकता है? प्रकृति की प्रेरणा से जन्मे और भाग्य-भरोसे पलकर बड़े हुए इन बालकों का शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य जैसा होना चाहिए, वैसा नहीं होता है। हवा के झोंखों के साथ छितराए हुए जैसी भी संगति में पड़ गए, वैसे बन जाते हैं। इनमें से किसी से किसी बड़ी बात की आशा-अपेक्षा नहीं की जा सकती।

बच्चे को सुयोग्य बनाने के लिए, स्वस्थ और सुसंस्कारी बनाने के लिए जनक और जननी, दोनों को एकदूसरे से अधिक योग्यता का परिचय देना पड़ता है। इस संदर्भ में काम आने वाली योग्यता में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है—दिलचस्पी। दिलचस्पी मन के मोदक फोड़ते रहने, डॉक्टर, वकील, कलेक्टर, मिनिस्टर बनाने के सपने देखने को नहीं कहते, वरन बच्चे के साथ बच्चा बनकर अपनी आदतें ऐसी बनानी-दिखानी पड़ती हैं, जिन्हें बच्चा आसानी से सीख सके और अपने स्वभाव का अंग बना सके। यही है वह मूल्य, जो सुसंतति की आकांक्षा करने वालों में से प्रत्येक को चुकाना पड़ता है।

बच्चा खाता तो है, पर उसे यह नहीं मालूम होता कि उसे क्या, कब और कितना खाना चाहिए? इसका निर्धारण करने के लिए विशेषतया माता को प्रवीण होना चाहिए। अपने और बच्चे के पाचनतंत्र का अंतर समझना चाहिए। इसलिए साथ बिठाकर वही नहीं खिलाने लगना चाहिए, जो स्वयं खाते हैं। अपने मस्तिष्क में बालक के पाचनतंत्र तथा आयु की दृष्टि से उपयुक्त मात्रा में भोजन का सही और समुचित ध्यान रखना चाहिए। यह कार्य एक सुशिक्षित नर्स का है। माता को अपने बालक के संबंध में तो

कम-से-कम यही भूमिका निभानी चाहिए। टट्टी और पेशाब नियत समय पर कराने की आदत कुछ दिन नियमित रूप से डाली जाए तो समय-कुसमय कपड़े खराब करने और झल्लाने की बिलकुल भी आवश्यकता न पड़ेगी।

स्वस्थ बच्चा दो सप्ताह का होने के बाद ही मुस्कराना चाहता है। यह अभिभावकों का काम है कि अपनी मुख-मुद्रा वैसी ही बनाकर बार-बार दिखाया करें, ताकि वह नकल करना सीखे और अपना तथा अभिभावकों का चित्त प्रसन्न रखे।

एक महीने का होने पर बच्चा अपनी जान-पहचान का क्षेत्र बढ़ाना चाहता है। इसलिए अभिभावक जब भी बच्चे के संपर्क में आएँ, नियत रंग की पोशाक और मुख-मुद्रा से संपर्क साधें। कभी-कभी बच्चे रोते पाए जाते हैं। बिना कारण कदाचित् ही कोई बच्चा रोता हो, वह अपनी आवश्यकताएँ प्रकट करता है। शरीर में कोई रोग होने से, मच्छर काटने तक, भूख लगने से लेकर सूनापन लगने तक के कारणों से उसका रोना शुरू होता है और देर तक चलता है। कभी-कभी फेफड़ों को मजबूत बनाने और पूरी साँस लेने की दृष्टि से भी बच्चे रोते और हाथ-पैर फेंकते हैं। अभिभावकों को इतना मनोविज्ञानी होना चाहिए कि बच्चे की आवश्यकताओं को ताड़ते रहें और तदनुरूप उपाय अपनाते रहें। अपनी समझ काम न करे तो दूसरे अनुभवियों से परामर्श लेना चाहिए।

सरदी-गरमी से बचाने के लिए कपड़े पहनाना तो ठीक है, पर वे ऐसे भारी या कसे हुए न होने चाहिए, जो शरीर के सभी अंगों तक ताजी हवा पहुँचाने में रुकावट डालें। शोभा और शृंगार के लिए कोई भी ऐसी चीज न पहनानी चाहिए, जो दबाव डाले।

दो-तीन महीने का होते-होते बच्चा नकल करना तेजी से सीखता है और एक वर्ष का होने तक कुछ शब्द बोलने लगता है। इस समय उसे सूनापन अखरता है। इसलिए पास बैठना, मालिस करना, खिलाना आदि संभव न हो सके तो ऐसे खिलौने ला देने चाहिए, जो मुँह में जाने पर कोई मुसीबत खड़ी न करें। समझ आने पर बच्चे पहले आकर्षक वस्तुओं को पकड़ते हैं और फिर मुँह में देने लगते हैं। चींटी, बर्र जैसे चलते-फिरते कोई भी जीव-जंतु उन्हें खिलौने लगते हैं। छोटे सिक्के हाथ लगें तो उन्हें भी मुँह में ठूँसते हैं और गले में नीचे उन्हें उतार लेने पर संकट में फँसते हैं।

निरंतर गोद में लिए रहने की आदत न डाली जाए। इससे उनकी स्वावलंबन वृत्ति दबती है और जो हिस्सा गोद में लेने के कारण दबता है, वह कमजोर या टेढ़ा होने लगता है। पालने में झुला देना ठीक रहता है, पर उसकी भी आदत न डाली जाए।

एक वर्ष के बाद शिष्टाचार की मोटी बातें स्वभाव में डालनी चाहिए। जैसे रसोई, शौच आदि स्थानों में नहीं जाना चाहिए। मूँछ, बाल आदि नहीं खींचने चाहिए, घड़ी, दवात आदि

इधर-उधर नहीं करनी चाहिए, ये बातें बार-बार अभ्यास कराने से बालक की समझ में आ जाती हैं। इसी प्रकार जूते कहाँ उतारने चाहिए? इसका अभ्यास भी कुछ बार वैसा करने या कराने से सहज ही हो जाता है।

बच्चे को कई हाथों में जाने देना चाहिए। सदा एक-दो हाथों में ही रहे तो औरों को अजनवी समझता है और उनके पास जाने से कतराता है। स्वभाव ऐसा बनाना चाहिए, जिसमें अपने-पराये का संस्कार अधिक न पनपने पाए। खिलौनों से दूसरे बच्चों को भी साथ खिलाए। खाने की चीजें बाँटकर खाए। जो चीज जहाँ रखने की है, उसे वहीं रखे और जरूरत पड़ने पर वहाँ से उठाए; ये आदतें शिष्टाचार में सम्मिलित हैं। उन्हें स्वयं उसके साथ करने और उससे भी कराने में ऐसी अनेक बातें स्वभाव का अंग बन सकती हैं, जिनसे उसे शिष्ट परिवार का बालक समझा जा सके।

पैदल चलने की आदत तीन पहिये वाली गाड़ी या बॉकर के सहारे डालनी चाहिए। पर आरंभिक दिनों में उसके साथ रहना चाहिए, ताकि गिर पड़ने से बचाया जा सके। बोलना सिखाना तब आता है, जब वस्तु या व्यक्ति का नाम पहले स्वयं लिया जाए और बाद में उससे वैसा ही कहने के लिए कहा जाए। गलतियों को धीरे-धीरे सुधारते रहा जाए और रोजमर्रा काम आने वाली वस्तुओं को खाने, रखने, पहचानने तथा काम बताने की प्रश्नोत्तरी बालकों के लिए शिक्षा का अच्छा तरीका है। जो सीखते जाते हैं, उससे वे प्रसन्न भी होते हैं। अन्य लोगों के सामने उनकी इस शिक्षा की परीक्षा लेना और सही उत्तर देने पर पुचकारना जैसा उपहार देना, उनका उत्साह बढ़ाने और सीखने में प्रगति लाने का अच्छा तरीका है।

बच्चे के या किसी और के शरीर पर गंदगी लगी हो, घर में कूड़ा-कचरा फैला हो तो उसकी सफाई के लिए घरवालों से कहने लगे, इशारा करने लगे तो समझना चाहिए कि बच्चे में स्वच्छता संबंधी संस्कारों का उदय हुआ। रूठने, मारने जैसी किसी बुरी आदत का आरंभ हुआ तो उसे बढ़ने नहीं देना चाहिए। आरंभ में ही उसे बुरी बात बताने और न करने की शिक्षा उस भाषा में देनी चाहिए, जिसमें समझ सकने की उसकी क्षमता हो। पाँच या दस तक गिनती गिनना एक-डेढ़ वर्ष के बच्चे सीख सकते हैं। शरीर के अंग, बरतनों के नाम, खाद्य पदार्थ, घर के लोगों के साथ रिश्ते आदि उन्हें आसानी से सिखाए जा सकते हैं। शिक्षा, स्वच्छता, शिष्टता का प्रशिक्षण बच्चे को उतना देते ही रहना चाहिए, जितना वह आसानी से हृदयंगम करता चले। ये छोटे काम हैं, पर बालक की प्रतिभा विकसित करने के लिए आवश्यक हैं। अभिभावकों की विशेषतया माता-पिता की दिलचस्पी आरंभ से ही रहे तो यह उपक्रम क्रमशः बालक को अधिक सुसंस्कारी बनाता चलेगा। ❐

स्वतंत्रता दिवस पर

अपने राष्ट्र के प्रति कर्तव्य

स्वतंत्रता संग्राम में जूझते हुए राणा प्रताप वन-पर्वतों में अपने छोटे परिवार सहित मारे-मारे फिर रहे थे। एक दिन ऐसा अवसर आया कि खाने के लिए कुछ भी न रहा। जंगली अनाज को पीसकर उनकी धर्मपत्नी ने जो रोटी बनाई थी, उसे भी वनबिलाव उठा ले गया। छोटी बच्ची भूख से व्याकुल होकर रोने लगी। राणा प्रताप का साहस टूटने लगा। वे इस प्रकार बच्चों को भूख से तड़पकर मरते देखकर विचलित होने लगे। एक बार मन में आया, शत्रु से संधि कर ली जाए और आराम की जिंदगी जिया जाए। उनकी मुख-मुद्रा गंभीर विचारधारा में डूबी हुई दिखाई दे रही थी।

रानी को अपने पतिदेव की चिंता समझने में देर न लगी। उनने प्रोत्साहन भरे शब्दों में कहा—"नाथ! कर्त्तव्यपालन मानव जीवन की सर्वोपरि संपदा है, इसे किसी भी मूल्य पर गँवाया नहीं जा सकता, सारे परिवार के भूखों या किसी भी प्रकार मरने के मूल्य पर भी नहीं। सच्चे मनुष्य न कष्टों से डरते हैं और न आघातों से, उन्हें तो अपने कर्त्तव्य का ही ध्यान रहता है। आप दूसरी बात क्यों सोचने लगे?"

प्रताप का उतरा हुआ चेहरा फिर चमकने लगा। उन्होंने कहा—"प्रिये! तुम ठीक ही कहती हो। सुविधा का जीवन तुच्छ जीव भी बिता सकते हैं, पर कर्त्तव्य की कसौटी पर तो मनुष्य ही कसे जाते हैं। परीक्षा की इस घड़ी में हमें खोटा नहीं, खरा ही सिद्ध होना चाहिए।" राणा वन में से दूसरा आहार ढूँढ़कर लाए और उन्होंने दूने उत्साह से स्वतंत्रता संग्राम जारी रखने की गतिविधियाँ आरंभ कर दीं।

* * *

जोधपुर के राजा जसवंतसिंह की मृत्यु के बाद उनका अबोध बालक अजीतसिंह गद्दी पर बिठाया गया। राज्य-व्यवस्था का काम दुर्गादास करने लगे।

उन दिनों राजा का स्थान किसी प्रकार ग्रहण करना ही उस राज्य को प्राप्त कर लेने के लिए पर्याप्त होता था। जनमत का विकास नहीं हो पाया था। राजा को मारकर सिंहासन पर आरूढ़ हो जाने के कुचक्र प्रायः राजमहलों में चलते रहते थे। अबोध बालकों के लिए तो ये दुरभिसंधियाँ और भी उग्र रूप से चलती थीं। दुर्गादास पर औरंगजेब ने डोरे डालने आरंभ किए। उन्हें किसी बहाने मिलने के लिए बुलाया। बड़ी आवभगत की और विदाई के समय आठ हजार स्वर्णमुद्राएँ भेंटस्वरूप प्रस्तुत कीं। इतने बड़े उपहार को देखकर दुर्गादास सन्न रह गए। उन्हें यह समझते देर न लगी कि यह प्रलोभन किस भूमिका का संपादन करने के लिए उन्हें दिया जा रहा है?

दुर्गादास ने कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा—"राजन्! हमें स्वर्णमुद्राएँ नहीं, आपकी सद्भावना चाहिए। हम लोग स्वल्प साधनों से भी अपना कर्त्तव्य पालन करते रहेंगे। इन मुद्राओं को अभी सरकारी खजाने में ही रहने दिया जाए। जरूरत पड़ी तो आप से और भी बड़ी सहायता माँगेंगे।"

औरंगजेब निरुत्तर हो गया। उसने देखा प्रलोभन ही सबसे बड़ी चीज नहीं है। दुनिया में ऐसे आदमी भी रहते हैं, जो कर्त्तव्यपालन के आगे हर प्रलोभन को ठुकराने का साहस कर सकें।

* * *

पारिवारिक आय-व्यय का संतुलन

जीवन में सुख की सृष्टि तब होती है, जब वह सुविकसित एवं संतुलित हो। जिसकी आय-व्यय में समुचित संतुलन रहेगा, वह स्वभावत: सुखी और संतुष्ट रहेगा। आय-व्यय का संतुलन बना रहना व्यय पर ही अधिक निर्भर रहा करता है। आय तो प्राय: लोगों की सीमित एवं सुनिश्चित रहा करती है। सामान्यत: उसमें कोई अस्त-व्यस्तता अथवा न्यूनाधिक्य नहीं होता। इस प्रकार की अस्त-व्यस्तता की संभावना अधिकतर व्यय में ही रहा करती है; क्योंकि यह आय की तरह सुनिश्चित नहीं रहने पाता। इसलिए अर्थव्यवस्था लाने और आय-व्यय को संतुलित रखने के लिए व्यय को नियंत्रित करने की अधिक आवश्यकता है।

जिस मनुष्य की आवश्यकताएँ जितनी कम होंगी और जितना अधिक वह मितव्ययी होगा, उसकी आर्थिक व्यवस्था उतनी ही सुविधाजनक रहेगी। जिसे पैसे की तंगी रहेगी, जिसे अपना काम चलाने के लिए दूसरों के आगे हाथ फैलाने और दाँत निकालने की आवश्यकता होगी; वह सुख-चैन के दर्शन नहीं कर सकता। जो कर्जदार होता है, वह एक प्रकार से पराधीन ही रहता है। देनदार का दैनिक जीवन एक प्रकार से लेनदार के पास रहन हो जाता है। वह जो कुछ कमाता है, अपने ऋणदाता के लिए ही कमाता है। अपनी आय का अधिकांश भाग उसे कर्ज का सूद-दर-सूद भरते रहने में ही निकालते रहना पड़ता है। इसी आय के रहते हुए जब उसे किन्हीं खरचों के लिए कर्ज लेना पड़ा है, तब उसी आय-व्यय के रहते, वह कर्ज का पैसा कैसे चुका सकता है? फिर कर्ज में केवल मूलधन ही नहीं, ब्याज भी देना होता है।

इसके विपरीत जो किसी का कर्जदार नहीं है, जिसको किसी का कुछ देना नहीं है, यहाँ तक कि किसी दैनिक आवश्यकता का भी ऋणी नहीं है, वह निश्चिंत होकर सोएगा, निर्द्वंद्व होकर विचरेगा। न कभी उसके कान में तकाजे के गरम शब्द पड़ेंगे, न उसे अपनी मजबूरी के लिए सफाई देनी पड़ेगी और न किसी बहाने के लिए झूठ बोलना पड़ेगा। सुखी रहना हो तो कभी किसी के देनदार न बनिए।

अपने सुख-चैन के रक्षार्थ, आर्थिक असुविधा एवं कर्जदारी से सदा-सर्वदा बचे रहने के लिए अपने पारिवारिक आय-व्यय (बजट) को उचित रूप से मितव्ययता के साथ बनाकर एक जिम्मेदार व्यक्ति की तरह जीवनयापन करना चाहिए। बजट बना लेने पर भी उसके अनुसार चलने में तब तक कठिनाई

बनी रहेगी, जब तक मनुष्य उसके प्रति पूरी तरह ईमानदार नहीं रहेगा।

मानिए किसी ने अपनी सौ रुपये की आमदनी में से दस रुपये बचत की मद में निकालकर बाकी नब्बे रुपये महीने के शुरू में ही खरचों को विविध मदों में बाँटकर बजट बना लिया, किंतु उसके अनुसार निष्ठापूर्वक चलता नहीं है; कभी इस मद का खरच काटकर उस मद में बढ़ा दिया तो कभी उस मद का इस मद में, तो उसका बजट फेल हो जाएगा और पारिवारिक व्यवस्था सुविधासंपन्न न रह सकेगी। जिस सरलता एवं स्निग्धता के लिए उसने बजट बनाया था, वह उद्देश्य पूरा न हो सकेगा। इसलिए बनाए हुए बजट के प्रति ईमानदार रहना बहुत आवश्यक है। जब तक बजट बन रहा है, तब तक ही उसमें हस्तक्षेप का अपना अधिकार समझिए। पर ज्यों ही वह एक बार बनकर अंतिम रूप पा जाए, उसका उसी प्रकार पालन करिए, जिस प्रकार शासन-विधान का पालन किया जाता है। निर्माणकाल में बजट आपके अधीन रहता है, बन जाने के बाद आप स्वयं अपने आप को उसके मातहत समझिए।

बजट एक प्रकार से पारिवारिक विधान ही है। इसका निर्माण यथासंभव परिवार के हर बालिग सदस्य को सम्मिलित करके ही करना चाहिए और सर्वसम्मति से पास होना चाहिए। ऐसा संभव हो सकने पर न तो कोई असंतोष का कारण ही रहेगा और न तब कोई उसका उल्लंघन करने को उद्यत होगा।

प्रगतिशील एवं सुविचारी परिवार अधिकतर अपने बजट इसी प्रकार सर्व-सदस्यता की विधि से ही बनाते हैं। इस व्यवहार से परिवार के सभी छोटे-बड़ों में एक उत्तरदायित्वपूर्ण मितव्ययता का स्वभाव विकसित होगा। परिवार की आर्थिक अवस्था का स्पष्ट ज्ञान रहने और उसके साथ अपनी जिम्मेदारी जुड़ी रहने से कोई भी सदस्य किसी खरच की निश्चित सीमा के बाहर जाने में अपनी हीनता समझेगा। यदि कभी कोई नया प्रलोभन उसे लुभाएगा भी तो भी वह संकोचवश उसका प्रस्ताव किए बिना ही अपने अंदर छिपा लेगा और अगले किन्हीं भी प्रलोभनों के प्रति अधिक-से-अधिक अनाकर्षित रहने में बड़प्पन समझेगा।

इस प्रकार परिमित एवं सर्वसम्मत बजट बनाने और सुविधापूर्वक चलाने के लिए हर अपेक्षाकृत अधिक सयाने सदस्य, घर के मुखिया को अपने से छोटे की सुख-सुविधा का ध्यान रखते हुए प्रत्येक की परिस्थिति एवं आवश्यकताओं के अनुसार व्यय की व्यवस्था करनी चाहिए। ऐसा करने से परिवार के लोगों में एकदूसरे के प्रति निस्स्वार्थ त्याग की भावना का विकास होगा और जिसने निस्स्वार्थपूर्ण त्याग-भावना का सौभाग्य प्राप्त कर लिया, उसके घर में ही स्वर्ग का शांतिपूर्ण वातावरण सदा बना रहेगा।

यदि भोजन, वस्त्र तथा निवास की नितांत अनिवार्य आवश्यकताओं के स्थान पर

अल्पावश्यक स्वाद, सुविधा, आमोद-प्रमोद की मदों को प्राथमिकता देकर आय का अधिक भाग दे दिया गया तो कुछ समय के आमोद-प्रमोद अथवा स्वाद-सुविधा के बाद सारा परिवार अधिक समय भूखा-नंगा ही रहेगा और इस प्रकार की असहनीय असुविधा की स्थिति में न तो स्वाद के चटकारे याद आएँगे और न आमोद-प्रमोद के साधन। आमोद-प्रमोद और सुविधा-साधनों का नंबर अन्न, वस्त्र तथा निवास के बाद आता है।

केवल इन्हीं के बाद नहीं, विलास वस्तुओं का नंबर और भी दो आवश्यकताओं के बाद आता है। पौष्टिक पदार्थ और जीवन-विकास की शिक्षा आदि साधनों के बाद। इसका ठीक-ठीक अर्थ यही है कि पहले पूरे परिवार के लिए अन्न, वस्त्र एवं निवास की व्यवस्था, उसके बाद जो बचे उससे घी, दूध, शाक-सब्जी, फल, मेवे आदि। वे भी पहले जीवन-विकास, शिक्षा आदि की मद पूरी करने के बाद। इसके बाद यदि न रहा जा सके तो आमोद-प्रमोद, शौक, स्वाद की वस्तु का नंबर है। यदि इनकी उपेक्षा करके अपने स्वास्थ्य एवं शिक्षा आदि जीवन-विकास की व्यवस्था को ही आमोद-प्रमोद मानकर आनंदित रहा जाए, तब तो कहना ही क्या? इन अनावश्यक मदों का पैसा आपकी बचत-मद में जाकर आय के अनुपात से आपकी मुट्ठियाँ भर सकता है।

इस प्रकार यदि वास्तव में आप अपने परिवार के साथ आजीवन अपनी सीमित आय में सानंद रहना चाहते हैं, तो मितव्ययता के साथ सर्वसम्मति से बचत-व्यय के साथ यथोचित बजट बनाइए और एक सुनिश्चित विधान के साथ उसका पालन करते हुए जीवनयापन कीजिए। ❐

राजा दिलीप के कोई संतान न थी। वे उपाय पूछने गुरु वसिष्ठ के आश्रम में पहुँचे। ऋषि ने कहा—"आप यहाँ प्राकृतिक वातावरण में रहिए, दुग्ध कल्प कीजिए और गौ चराने के निमित्त आप दोनों उसके पीछे-पीछे दिनभर भ्रमण कीजिए।" राजा-रानी इसी उपचार को करने लगे। एक दिन मायावी सिंह ने राजा की गुरुभक्ति को परखना चाहा और गाय के ऊपर आक्रमण कर दिया। राजा का धनुष-बाण काम न दे रहा था। उनने सिंह से कहा—"भले ही आप मुझे खा लें। पर गौ को छोड़ दें। उनकी गाय को गँवाकर मैं गुरु को क्या मुँह दिखाऊँगा।"

राजा की भक्ति-भावना और उत्तरदायित्व-दृढ़ता की परीक्षा करके सिंह ने गाय को छोड़ दिया और उन्हें भी नहीं खाया। समयानुसार दिलीप की तप-साधना एवं कर्त्तव्यनिष्ठा के फलस्वरूप श्रेष्ठ संतान उपलब्ध हुई, जिसने रघुकुल परंपरा को चलाया।

तप और पुण्य

तप के कई स्वरूप हैं। गायत्री महाविज्ञान में परमपूज्य गुरुदेव ने 12 प्रकार के तपों का वर्णन किया है—1. अस्वाद तप, 2. तितिक्षा तप, 3. कर्षण तप, 4. उपवास तप, 5. गव्य कल्प तप, 6. प्रदातव्य तप, 7. निष्कासन तप, 8. साधना तप, 9. ब्रह्मचर्य तप, 10. चांद्रायण तप, 11. मौन तप तथा 12. अर्जन तप। इन सभी प्रकार के तप के स्वरूपों में शरीर व मन को कष्ट उठाना पड़ता है। जिस तरह पानी को उबालने के लिए उसे आग पर गरम करना होता है, उसी तरह तप में भी व्यक्ति को तपना होता है, गलना होता है, ढलना होता है। तप कष्ट सहन करने का दूसरा नाम है।

तप के विभिन्न प्रकारों को तीन स्वरूपों में विभक्त किया जा सकता है—1. परिशोधन तप, 2. अर्जन तप, 3. परम तप। परिशोधन तप वह है, जिसमें व्यक्ति अपने चित्त का परिशोधन करके उसका परिष्कार करता है। अर्जन तप वह है, जिसमें व्यक्ति तप-ऊर्जा को धारण करता है और उसे अपने अंदर संचित करता है। सबसे विशिष्ट तप परम तप है। यह उच्चस्तरीय व विशिष्ट प्रयोजन के लिए होने के कारण अपेक्षाकृत अधिक गुह्य और गहन है। इसका प्रयोग व्यक्तिगत प्रयोजन के लिए न होकर समष्टिगत प्रयोजनों के लिए होता है। यह तप का सर्वाधिक विकसित स्वरूप है।

परम तप ही वह आध्यात्मिक तप है, जिसके माध्यम से जीवात्मा अंतरिक्ष के ऊर्जा-स्रोतों को अपनी ओर मोड़ लेती है; ऊर्जा के विभिन्न स्वरूपों को धारण करती है और इच्छानुसार उनका सदुपयोग करती है। अंतरिक्षीय ऊर्जा-स्रोत नदियों के प्रवाह की तरह होते हैं। इनका प्रवाह अत्यंत ही वेगपूर्ण व ऊर्जा से भरपूर होता है और इनको धारण करना भी सरल व आसान नहीं है। इसके लिए शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक दृष्टि से सशक्त होना भी जरूरी है।

सामान्यत: सभी प्रकार के तप करने का एक ही उद्देश्य होता है कि चित्त की वृत्तियों व कर्मसंस्कारों का परिशोधन हो। जैसे-जैसे जीवात्मा के ऊपर से चित्त के कुसंस्कारों का आवरण हटता जाता है, उसके अंदर ऊर्जा को धारण व संगृहीत करने की क्षमता पैदा होने लगती है और जब जीवात्मा के चित्त में छाए हुए सभी तरह के संस्कारों का परिशोधन व परिष्कार हो जाता है, तब चित्त स्फटिक की तरह निर्मल व स्वच्छ बन जाता है। तभी जीवात्मा परम तप के योग्य बनती है।

परम तप का अनुपम उदाहरण श्री अरविंद व रमण महर्षि का तप है, जिसके माध्यम से उन्होंने सूक्ष्मजगत् में हलचलें पैदा कीं, स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए लोगों में चेतना को जाग्रत किया

और देश को स्वतंत्र कराने के लिए उपयुक्त परिस्थितियों का निर्माण किया। मनुष्य का कार्यक्षेत्र केवल एक निर्धारित स्थल ही नहीं, अपितु संपूर्ण ब्रह्मांड है, जिसमें वह अपनी योग्यता के अनुसार कार्य कर पाता है। ठीक इसी तरह श्री अरविंद जब पांडिचेरी आश्रम में रहते थे, तब उन्होंने अपने तपोबल के द्वारा पांडिचेरी में रहकर ही द्वितीय विश्वयुद्ध को समाप्त करने के लिए आसुरी शक्तियों को पराजित किया था और इसके प्रभाव से ऐसी परिस्थितियाँ स्थूलजगत् में स्वत: ही उत्पन्न हो गई थीं, जिससे युद्ध में अग्रणी देशों को अपने पाँव पीछे करने पड़े और युद्ध को विराम देना पड़ा।

परमपूज्य गुरुदेव ने भी अपने परम तप के द्वारा अर्जित ऊर्जा के माध्यम से अनेकों ऐसी विभीषिकाओं को होने से रोका था, जिनके घटने पर संपूर्ण मानव जाति का अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता था। इसके अतिरिक्त युग निर्माण हेतु बड़ा उत्तरदायित्व भी आचार्यश्री ने इसी परम तप से संगृहीत ऊर्जा के कारण वहन किया। उन्होंने अपने सूक्ष्मशरीर से तप करके युग निर्माण हेतु अपेक्षित शक्ति को अर्जित किया, जिसके परिणाम निश्चित रूप से स्थूलजगत् में धीरे-धीरे परिलक्षित होने लगेंगे।

तप ऐसी साधना है, जो आरंभ में तो कष्टकारी लगती है, लेकिन इसके सुपरिणाम मिलने पर व्यक्ति को इतना आनंद आता है कि वह इसे अपने जीवन का एक अभिन्न अंग बना लेता है। जो तप को अपने जीवन का अंग नहीं बना पाते; वे अपने जीवन में कुछ विशेष अर्जित नहीं कर पाते। इस तरह तप का अपना विशिष्ट स्थान है। इसलिए मनुष्य को निरंतर किसी-न-किसी रूप में तप करते रहना चाहिए। मौन, एकांत व एकाग्रता ही तप का दूसरा नाम है; क्योंकि इसके माध्यम से तप को अर्जित किया जाता है। तप हेतु की गई साधनाओं की चर्चा वर्जित है; अन्यथा उसके द्वारा तप-संपदा संचित नहीं होती, खरच हो जाती है—नाम व यश के रूप में।

साधना करने वालों को लोग सम्मान देते हैं, उन्हें बड़ा तपस्वी मानते हैं। इस तरह साधना करने के कारण उन्हें जो सम्मान मिलता है, वह तप द्वारा अर्जित संपदा का ही परिणाम है, जिसका यश-सम्मान के रूप में भुगतान हो जाता है। इसलिए साधना के संदर्भ में मौन रहकर केवल साधना ही करना चाहिए। एकांत इसके लिए अत्यंत जरूरी है; अन्यथा मन को एकाग्र करना संभव न होगा और एकाग्रता के बिना साधना का कोई सुफल नहीं। जो जितना एकाग्र होता है, वह उतनी ही गहराई में जाकर साधना के हीरे-मोतियों को गोता लगाकर ढूँढ़ लाता है।

तप व पुण्य अर्जन की इस क्रिया में सबसे बाधक तत्त्व अहंकार है, जो कि अतिशीघ्रता से तप व पुण्य की पूँजी का क्षय करता है। मनुष्य का जीवन इस सृष्टिरूपी महासागर में एक बुलबुले की तरह है, जिसका अस्तित्व क्षणिक है, किंतु तप व पुण्य ही वे संपदाएँ हैं, जो उसे यश व कीर्ति के माध्यम से सदा अमर रखती हैं। अत: अहंकारशून्य होकर इनका अर्जन ही हमारा एकमात्र कर्त्तव्य होना चाहिए। ❐

कुसंगति से बचें

मनुष्य के स्वभाव में भली और बुरी, दोनों ही प्रकार की प्रवृत्तियाँ हैं। संगति और वातावरण जिन प्रवृत्तियों को आकर्षित, आमंत्रित करते हैं; वे ही प्रवृत्तियाँ बढ़ती और फलती-फूलती हैं।

संगति जैसा स्वाभाविक निर्णायक तत्त्व भी वातावरण पर ही अवलंबित होता है और वातावरण भी वही प्रभावित करता है, जिसके कि निकट संपर्क में रहना पड़ता है। वातावरण यों एक स्थिति का नाम है। जहाँ जिस प्रवृत्ति के लोग अधिक होंगे, वहाँ वैसा ही वातावरण उत्पन्न होगा। इन अर्थों से मनुष्य का स्वभाव इस बात पर निर्भर करता है कि वह कैसे व्यक्तियों का साथ करता है? दृढ़ संकल्पी और निष्ठावान व्यक्तियों की बात अलग है; अन्यथा लोग अपने निकटवर्ती व्यक्तियों और परिस्थितियों से प्रभावित होकर ही कोई क्रिया-कलाप या गतिविधियाँ अपनाते हैं। इसी कारण कहा गया है—

संगति से गुण होत है, संगति से गुण जाय।
बाँस-फाँस और मिसरी, एक ही भाव बिकाय॥

जैसे लोगों के साथ रहना पड़ता है, जिनका निकट संपर्क मिलता है, उनके गुण ही सबल होकर व्यक्ति को अपने समान बना लेते हैं। मिसरी की डली में पड़ी हुई बाँस की फाँस भी मिसरी के ही भाव बिकती है। व्यक्ति निसर्गतः तो अपना कोई बना-बनाया व्यक्तित्व लेकर नहीं आता। बचपन में भी उसे जिस तरह के बच्चों की संगति मिलती है, वह वैसे ही हाव-भाव और रीति-नीति अपनाता है। वही आदतें आगे चलकर अपने अनुरूप स्वभाव के लोगों को खोज लेती हैं और वैसी प्रवृत्तियाँ अपनाती हैं।

परिस्थितिवश अच्छे लोग भी जब बुरे वातावरण में फँस जाते हैं तो व्यक्तित्व में अपर्याप्त दृढ़ता न होने के कारण अच्छे स्वभाव के लोग भी बुरी आदतें सीख लेते हैं। उदाहरण के लिए नशेबाजी को ही लें। नशे में न कोई जायका होता है और न ही उसकी कोई आवश्यकता, उपयोगिता रहती है। फिर लोग क्यों नशा करते हैं? सौ में से निन्यानवे लोग अपने नशेबाज यार-दोस्तों के आग्रह पर बीड़ी-सिगरेट का कश लेते हैं। फिर धीरे-धीरे यह आदत उनके स्वभाव में इस कदर रच-पच जाती है कि छोड़े नहीं छूटती।

नशे की तरह ही जुआ खेलना, गाली-गलोज करना, निठल्ले बैठना, मुफ्तखोरी करना, समय बरबाद करना, फैशन में रहना आदि कितनी ही ऐसी दुष्प्रवृत्तियाँ हैं, जिन्हें व्यक्ति अपनी मित्र-मंडली में रहकर ही सीखता है। जिन व्यक्तियों के साथ हम मित्रता करते हैं, स्वाभाविक ही उनकी दुष्प्रवृत्तियों से भी मित्रता करने लगते हैं और न जाने कहाँ-कहाँ की गंदी आदतें सीख जाते हैं। यहाँ तक कि कोई आदमी व्यभिचारी या चरित्रहीन बनता है तो उसके इस पतन का शत-प्रतिशत कारण उसकी संगति ही रहती है; अन्यथा आरंभिक जीवन में तो सभी सदाचारी रहते हैं। सामाजिकता, लोक-लाज, अपमान का भय और प्रचलित मान्यताओं की पाबंदी हमारे समाज में कुछ है ही इस प्रकार की कि व्यक्ति का कुमार्गगामी होना कठिन है। कदम-कदम पर इस राह पर पग बढ़ाते हुए भय, संकोच और लज्जा उत्पन्न होती है। लेकिन कुसंग में, बुरे साथी मिलने पर यह लज्जा और

झिझक छूट जाती है। बुरे साथियों के साथ गंदी हँसी-मजाक में रुचि लेने के साथ उत्पन्न होने वाला रस दिनोंदिन पतन के गर्त में धकेलता जाता है। इसके विपरीत अच्छे वातावरण में रहने और अच्छे लोगों की संगति का भी इसी प्रकार अच्छा प्रभाव पड़ता है।

न केवल मनुष्यों पर वरन पशु-पक्षियों पर भी इसका प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित देखा जाता है। प्राचीनकाल में तो यह स्थिति हमारे लिए गौरवास्पद ही कही जाएगी कि ऋषि-मुनियों के आश्रम में सिंह और गाय एक ही स्थान पर स्वतंत्र और निर्भय विचरण करते थे। आजकल घरेलू पालतू पशु-पक्षियों पर भी वातावरण के प्रभाव को देखा जा सकता है। घर में पिंजड़े में पाले जाने वाले तोते वही बातें करना सीख जाते हैं, जो दिन-रात सुनते हैं। तोते गालियाँ भी बकते हैं और आने-जाने वालों का अभिवादन-स्वागत भी करते हैं। इस आधार पर प्राचीनकाल के उन विवरणों को भी गलत नहीं बताया जा सकता; क्योंकि जिस स्थान पर प्रेम और अहिंसा की सद्भावनाओं का प्रबल-प्रचंड प्रभाव विद्यमान हो, वहाँ कोई भी उससे प्रभावित हुए बिना नहीं रहता। शेर, चीते सरकस में रिंग मास्टर के भय से अनुशासित रहते हैं। प्रेम तो भय से असंख्य गुना शक्तिशाली है, उसका प्रभाव क्यों नहीं होगा?

फूल टूट-टूटकर जिस मिट्टी में गिरते हैं, वह भी फूलों की सुगंध ग्रहण करने लगती है। चंदन वृक्ष के आस-पास विद्यमान पेड़-पौधे भी चंदन की सुगंध से सुवासित हो जाते हैं तो फिर क्या कारण है कि सद्गुणी और सज्जन व्यक्तियों के संपर्क में रहकर व्यक्ति वैसा न बनने लगे। बुरे व्यक्तियों के संग से बुराइयाँ आती हैं तो यह भी निश्चित है कि अच्छे व्यक्तियों का संसर्ग करने पर व्यक्ति में अच्छी प्रवृत्तियाँ उभरकर आएँ। सत्पुरुषों के संपर्क में मनुष्य की सत्प्रवृत्तियाँ निश्चित रूप से उभरकर आती हैं। सूर्यमुखी का फूल उधर मुड़ता रहता है, जिधर की ओर सूरज होता है। सुबह होते ही कमल की कली का मुँह खुल जाता है। उसी प्रकार संसर्ग के अनुरूप ही मनुष्य की अंतरात्मा में भी सत्प्रवृत्तियाँ और सद्गुण उभरकर आने लगते हैं।

प्रश्न उठता है कि अच्छी और बुरी प्रवृत्तियाँ दोनों ही विद्यमान हैं और अच्छाई अपने आप में शक्तिशाली है तो बुरे व्यक्तियों के संसर्ग से भय कैसा? यह ठीक है कि सत् तत्त्व सामर्थ्यवान और शक्तिशाली है, पर उसकी सामर्थ्य व्यक्ति के अपने आत्मबल के द्वारा ही विजयी या विजित होती है। शस्त्र अच्छे हों पास में बंदूक के स्थान पर बढ़िया राइफल हो, चलाना भी आता हो, पर वक्त पड़ने पर हाथ-पैर फूल जाएँ और साहस जवाब दे जाए तो अकेली बंदूक या राइफल क्या कर लेगी? हमारा स्वभाव लाख अच्छा हो, लेकिन इतना आत्मबल न हो कि बुरे व्यक्तियों से अप्रभावित रह सकें तो वही प्रवृत्तियाँ हम पर भी हावी हो जाती हैं। इसलिए संगति से होने वाले प्रभाव के महत्त्व को जानकर हमें चाहिए कि हम अपना संपर्क बुरी आदतों और बुरे स्वभाव के व्यक्तियों से न रखें।

अतः आवश्यक है कि अपने संगी-साथियों का चुनाव करते समय विश्लेषण करें और समझ-बूझकर ही मित्रों का चुनाव करें। कुसंगति से बचना और अच्छे लोगों के साथ से लाभ उठाना ही सत्प्रवृत्तियों को विकसित करने का एकमात्र उपाय है। इस ओर उपेक्षा तनिक भी नहीं करनी चाहिए। अपना संपर्क दुष्ट और दुराचारी लोगों के साथ बन गया है तो उसे छोड़ने में जरा भी प्रमाद या लापरवाही नहीं करनी चाहिए और सज्जनों से अपना संपर्क है तो उसे घनिष्ठ बनाने के लिए शक्तिभर प्रयत्न करना चाहिए। ❐

अहंकार का परित्याग कीजिए

अहंकार का नाश करने में मनुष्य को सर्वप्रथम तत्पर होना चाहिए; क्योंकि यही सारे अनर्थों का मूल है। ध्वंस, दु:ख और विनाश के ही परिणाम इससे प्राप्त होते हैं। रावण की शक्ति का कुछ ठिकाना न था, कंस का बल और पराक्रम जगत् विख्यात है। दुर्योधन, शिशुपाल, नेपोलियन, हिटलर आदि की शक्तियों के आगे संसार काँपता था, किंतु उनका अहंकार ही उन्हें खा गया। मनुष्य को पतन की ओर ले जाने में अहंकार का ही हाथ रहता है। श्रेय के साधक को इससे दूर ही रहना चाहिए। भगवान सबसे पहले अभिमान ही नष्ट करते हैं। अहंकारी व्यक्ति को कभी उनका प्रकाश नहीं मिल सकता।

अहंकार एक प्रकार की संग्रहवृत्ति है। अहं के योग से मनुष्य जगत् की प्रत्येक वस्तु पर एकाधिकार चाहता है। उसका लाभ वह अकेले ही उठाना चाहता है। किसी दूसरे को हस्तक्षेप करते या लाभ उठाते देखकर, वह जल-भुन उठता है और प्रतिकार के लिए तैयार हो जाता है। जब तक यह पाप पराकाष्ठा तक नहीं पहुँच जाता, तब तक भले ही कोई शोषण, दमन, अपहरण तथा अनैतिक भोग भोगता रहे, किंतु अंतत: सभी लोग उसका साथ छोड़ देते हैं। साधन और परिस्थितियाँ शीघ्र ही विपरीत हो जाती हैं, तब मनुष्य को हार माननी पड़ती है, मुँह की खानी पड़ती है और कभी-कभी तो सर्वनाश के ही दर्शन करने पड़ते हैं।

परमात्मा किसी भी वस्तु का संग्रह नहीं करता। वह लोकहितार्थ अपने दान-अनुदान विस्तीर्ण करता रहता है। इसी में उसे आनंद मिलता है। मनुष्य की महानता भी इसी में है कि अपनी संपूर्ण शक्तियों को दान रूप में विस्तीर्ण करता रहे। इसी से उसे सच्चा आनंद प्राप्त हो सकता है, किंतु जब तक दानवृत्ति संकीर्ण होकर केवल अपने भोग तक ही सीमित हो जाती है तो उसे अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है। इन बाधाओं को नष्ट करने में उसे शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। जहाँ तक संचय परोपकार के लिए किया जाता है, वहाँ तक अहंभावना उचित है, पर उसे पर-पीड़न से रहित होना चाहिए। शुद्ध भाव से वस्तुओं का संग्रह और उन्हें लोक-कल्याण के लिए दान कर देने में कोई हानि नहीं, वरन इससे आत्मा विकसित होती है, पर यहाँ भी सांसारिक यश की कामना का विग्रह उत्पन्न हो सकता है। अत: दान की वृत्ति भी उदार और निरहंकार होनी चाहिए।

यह स्थिति तब आती है, जब अपना कर्त्ता-भाव पूर्ण रूप से समाप्त हो जाता है। कर्त्तव्य तो सभी करते हैं, किंतु जो अपने अधिकार ईश्वर के लिए छोड़ देते हैं और समष्टि रूप से इस बात के लिए राजी हो जाते हैं कि 'इस संपूर्ण का कर्त्ता-धर्ता परमात्मा ही है, उसी की शक्ति, संकल्प और प्रेरणा से संसार की गतिविधियाँ चल रही हैं, मनुष्य तो निमित्त मात्र है, मशीन के एक छोटे-से पुरजे की तरह उसे चलते रहने में ही गौरवानुभव करना चाहिए।' ❑

पूज्यवर की लेखनी से

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय : अमृत कलश

पूज्यवर ने अपने सभी मानसपुत्रों, अनुयायियों के लिए मार्गदर्शन एवं विरासत में जो कुछ लिखा है, वह अलभ्य ज्ञानामृत (पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय सत्तर खंडों में) अपने घर में स्थापित करना ही चाहिए। यदि आपको भगवान ने संपन्नता दी है, तो ज्ञानदान कर पुण्य अर्जित करें। विशिष्ट अवसरों एवं पूर्वजों की स्मृति में पूज्यवर का वाङ्मय विद्यालयों, पुस्तकालयों में स्थापित कराएँ। आपका यह ज्ञानदान आने वाली पीढ़ियों तक को सन्मार्ग पर चलाएगा, जो भी इसे पढ़ेगा धन्य होगा।

45. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक सेवाधर्म के उपासक ₹150

संस्कृति और राष्ट्र की रक्षा के लिए सेवाधर्म के सच्चे उपासकों ने किस प्रकार अपने को नियोजित किया; इसे सीखने के लिए इनका अवलोकन एवं स्वाध्याय आवश्यक है—

- लोक-कल्याणव्रती महात्मा बुद्ध।
- अहिंसा एवं अपरिग्रह के प्रतीक—महावीर स्वामी।
- मानवता के उपासक—ईसामसीह।
- वैदिक धर्म के पुनरुद्धारक—जगद्गुरु शंकराचार्य।
- व्यावहारिक अध्यात्म के शिल्पी—संत कबीर।
- प्राणिमात्र के समदर्शी—संत नामदेव।
- दलितों को गले लगाने वाले—गुरुनानक देव।
- धार्मिक नवचेतना के अवतार—महाप्रभु चैतन्य।
- सेवा-सहिष्णुता के उपासक—संत तुकाराम।
- भक्ति-शक्ति स्वरूप—समर्थ गुरु रामदास।
- भक्ति-शौर्य संपन्न—गुरु गोविंदसिंह।

47. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता ₹150

हमारे देश में प्राचीन मान्यता रही है कि जिस परिवार में नारी को समुचित सम्मान मिलता है, वह परिवार सुनिश्चित रूप से फलता-फूलता है। यही स्थिति समाज के साथ भी है; किंतु कुछ महान नारियों ने अपने समाज की विषम धारा को बदला है, इनमें हैं—

- विश्व की महान क्रांतिकारी महिलाएँ।
- क्रांति की अग्रदूत भारतीय वीरांगनाएँ।
- सेवाधर्म की सिद्ध-साधिकाएँ।
- भिखारिन छोगरिया बाई का दान।
- समाजसेवी विदेशी नारियाँ—गोल्डामेयर, क्लेरा बर्टन, अन्ना फ्रायड।
- उदारमना महिला—कमलादेवी चट्टोपाध्याय।

46. भव्य समाज का अभिनव निर्माण ₹150

समाज का सर्वतोमुखी विकास समाज की समता और उसकी एकता पर निर्भर है। समाज में व्याप्त अनेक भेद-प्रभेद और विरूप-विषम मान्यताओं को त्यागकर ही उसकी उन्नति होती है। इसके लिए हमें यह भी जानना होगा—

- सभ्य समाज की अभिनव संरचना।
- हमारी आध्यात्मिक क्रांति और प्रबुद्ध व्यक्ति।
- नया संसार बसाएँगे, नया इनसान बनाएँगे।
- प्रस्तुत विश्वसंकट में हमारा कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व।
- वर्गभेद एवं ऊँच-नीच की समाप्ति।
- रामायण में छुआछूत पर चिंतन।
- एकता-समता की ओर, संघे शक्ति: कलौयुगे।
- संगठन तो बनें पर सज्जनों के ही।
- समग्र प्रगति सहयोग-सहकार पर निर्भर।
- सहकारिता एक अमोघ शक्ति।
- संगठन का मेरुदंड स्वयं बनें।

48. समाज का मेरुदंड : सशक्त परिवार तंत्र ₹150

परिवार के प्रति यदि सच्ची आत्मीयता, शुभेच्छा, सद्भावना किसी के मन में है तो उसे क्रियान्वित करने का एकमात्र मार्ग यही है कि परिवार के सदस्यों को सुसंस्कृत बनाया जाए। पर इसके कुछ नियम हैं, सिद्धांत हैं, जिन्हें जानना आवश्यक है—

- समाज देवता का अनुपम उपहार—परिवार।
- पारिवारिक सुसंस्कारिता की प्रमुखता।
- वातावरण का मनुष्य पर प्रभाव।
- सुधार-परिवर्तन की सरल प्रक्रिया।
- पथभ्रष्ट परिवार कैसे सुधरें ?
- बालनिर्माण में परिवार की भूमिका।
- संयुक्त परिवार एक आदर्श प्रणाली।
- परिवार, न तोड़ें।
- अधिक व्यय करने की हानियाँ।

स्वतंत्रता दिवस पर

राष्ट्र आपको करता नमन

राम! आपका राष्ट्र, आपको करता आज नमन,
राष्ट्र-भूमि हो गई 'राम की जन्मभूमि' शुभ-दिन।

धन्य अयोध्या, जहाँ आप-से योद्धा का अवतार,
सोने की लंका भी जिस पर, सौ-सौ बार निसार,
टिक न सके, जिस योद्धा के सम्मुख अन्याय, अनीति,
कुचल दिया हर अन्यायी को, यही आपकी रीति,

राम-द्रोह करने वालों का, होता रहा दमन।
राम! आपका राष्ट्र, आपको करता आज नमन,
राष्ट्र-भूमि हो गई 'राम की जन्मभूमि' शुभ-दिन।

भरा राष्ट्र की रग-रग में है, राम आपका रक्त,
शक्ति अयोध्या के योद्धा की, बतलाएगा वक्त,
'आत्मबोध' का छेड़ेंगे जब, जामवंत प्रसंग,
कूद पड़ेंगे आग लगाकर पूँछों में बजरंग,

असुर मिटेंगे, सुर-संस्कृति की सीता हुई हरन।
राम! आपका राष्ट्र, आपको करता आज नमन,
राष्ट्र-भूमि हो गई 'राम की जन्मभूमि' शुभ-दिन।

'राम-राज्य' स्थापित होगा, होंगे पूरन काज,
दैहिक, दैविक, भौतिक, त्रय तापों से मुक्त समाज,
ऊँच-नीच का भेद न होगा, शबरी हो या निषाद,
'हरि को भजे सो हरि का होई' इसमें कौन विवाद,

राम! आपका राष्ट्र, आपको करता आज नमन,
राष्ट्र-भूमि हो गई 'राम की जन्मभूमि' शुभ-दिन
राम! आपके साम्य भाव को करता जगवदंन।
राम! आपका राष्ट्र, आपको करता आज नमन॥

—मंगल विजय

12/8/24

गायत्री तपोभूमि,मथुरा

गायत्री जयन्ती पर्व

युग निर्माण योजना

(मासिक)

R.N.I. No. 13636/64

प्र.ति. 17- 7 2024

Regd No. Mathura- 024/2024-2026

Licensed to Post Without Prepayment

No: Agra/WPP-10/2024-2026

गायत्री तपोभूमि, मथुरा

गायत्री जयन्ती दीप यज्ञ

स्वामी युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा के लिए मृत्युंजय शर्मा द्वारा युग निर्माण योजना ट्रस्ट, मथुरा से प्रकाशित तथा युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा से मुद्रित। संपादक- ईश्वर शरण पाण्डेय, सह संपादक- सूर्यमणि तिवारी, दीनदयाल अमृते

दूरभाष नंबर-(0565)2530115, 2530399, 2530128, 2530200 मो.- 09927086289, 09927086287

E-Mail; yugnirman@yugnirmanyojna.org